युगल रस

श्रीमत्पदवाक्यप्रमाणपारावारीण,
वेदमार्गप्रतिष्ठापनाचार्य, निखिलदर्शनसमन्वयाचार्य,
सनातनवैदिकधर्मप्रतिष्ठापनसत्संप्रदायपरमाचार्य,
भक्तियोगरसावतार, भगवदनन्तश्रीविभूषित

जगद्गुरु १००८

स्वामी श्री कृपालु जी महाराज

भवार्थ लेखिका:

सुश्री ब्रजकुंजरी देवी

पी. एच. डी.- हिन्दी

जगद्गुरु कृपालु परिषत्

युगल रस

साधना भवन ट्रस्ट, भक्ति धाम

मनगढ़ (कुण्डा), जिला प्रतापगढ़-२२९४१७ (यू.पी.)इण्डिया

फोन: ०५३४१-२३०२८२, २३०४४२

श्यामा श्याम धाम

रमन रेती रोड, वृन्दावन-२८११२४ (यू.पी.)इण्डिया

फोन: ०५६५-२५४०५३०

रंगीली महल

नंदगाँव रोड, बरसाना, जिला-मथुरा-२८१४०५ (यू.पी.)इण्डिया

फोन: ०५६६२-२४६२३५

www. jagadgurukripaluparishat.org (jkp.org)

सर्वाधिकार सुरक्षित © २०००,२००३

साधना भवन ट्रस्ट, भक्ति धाम, मनगढ़

इस प्रकाशन का कोई भी हिस्सा पूर्ण या आंशिक रूप से किसी भी रूप में इलैक्ट्रानिक, यांत्रिक, फोटोग्राफिक अभिलेखन अथवा अन्य किसी भी प्रकार से प्रतिलिपि अथवा प्रसारित न किया जाय।

प्रकाशक:

राधा गोविंद समिति

कृष्ण कुंज, २२/५२ वेस्ट पंजाबी बाग, नई दिल्ली-२६

फोन: ०११-२५१७५१९६, २५४३३३२८

e-mail: rgs108del@yahoo.com

प्राक्कथन

पुस्तक के नाम से ही पुस्तक का विषय स्पष्ट हो जाता है। समस्त वेदों, शास्त्रों, पुराणों आदि के द्वारा यह निर्विवाद सिद्ध सिद्धान्त है कि प्रत्येक जीव का चरम लक्ष्य आनन्द प्राप्ति ही है और वह आनन्द या रस स्वयं रसिक शिरोमणि परब्रह्म श्रीकृष्ण ही हैं यथा **'रसो वै सः' 'आनन्दो ब्रह्मेति व्यजानात्'** आदि। वस्तुतः महाभावरूपा महाशक्ति राधा एवं सर्वशक्तिमान भगवान् श्रीकृष्ण एक ही हैं। अतः **युगल रस** पुस्तक में मैंने श्री राधाकृष्ण दोनों की ही मधुरातिमधुर दिव्य लीलाओं का निरूपण किया है साथ ही भक्ति सम्बन्धी शास्त्रीय सिद्धान्तों को भी पदों के माध्यम से प्रकट किया है जिससे भगवदनुरागीजन साध्य शिरोमणि श्री राधाकृष्ण दिव्य प्रेम प्राप्ति के सर्वश्रेष्ठ साधन श्रवण, कीर्तन एवं स्मरण भक्ति का अभ्यास सहज रूप में, सरलता से कर सकें। यदि किसी को कुछ लाभ न भी प्राप्त हो तो इसे स्वान्तःसुखाय ही समझियेगा।

जगद्गुरुः कृपालुः

अनुक्रमणिका

ध्रुव पंक्ति	कीर्तन नं.	पृष्ठ सं.
अति गूढ़ तत्व राधा	६६	१२८
अति प्यारी छवि प्यारी	८०	१५०
अति भोरी भारी मेरी प्यारी	७४	१३९
अति ह्वै गई अब मैया	४५	८७
अनुपमेय श्री राधे	७५	१४२
अपना बनाया तोहिं कान्हा	२५	४८
अपनी ओर लखु राधे	८३	१५६
अब न कहौं तोय मैया	३३	६४
अब यह जाना कान्हा	११	२२
अबहिं बड़ो करु मैया	३४	६६
अस सुकुमारी प्यारी	७६	१४४
आज मैं सुनावूँ खरी खोटी	२७	५२
आ माँ निज शिशु ढिग श्यामा	८४	१५८
आ भी जावो कान्हा	२९	५६
इत को तो आना टुक कान्हा	४६	९०
उभय रूप जग जाना	१२	२४
करु सुमिरन मन राधे	६७	१२९
कान्हा सम मम कान्हा	४२	८१

कान्हा सम है छवि कान्हा	२१	४१
का न कान तव कान्हा	२६	५०
काहे चित चोरा मोरा कान्हा	४७	९२
कैसे कहूँ तू कृपालु कान्हा	२०	३९
कैसे कोउ जाने तोहिं कान्हा	१०	१९
कैसो है कन्हैया तेरो मैया	४८	९३
कोउ सखि कान्हा ढिग जा ना	४९	९५
को कह सम पिय प्यारी	५	९
गावो गुन गन राधा	६८	१३१
गावो सब हिलिमिलि राधे	६९	१३२
चंचल चल हट तजु अंचल पट	५१	९९
चलहु अंत कहुँ मैया	५०	९७
चह बस ब्रजरस राधे	८५	१६०
छिन-छिन भज मन राधे	७१	१३५
जा जा भरि पाई तोसों यारी	५२	१०१
जानन चह सब कान्हा	१९	३७
जाना नहिं 'मैं' को मैंने कान्हा	१७	३४
जाने का कै गयो कान्हा	५४	१०४
जाने न अनारी रति नारी	५३	१०३
जा रे जा रे कनुआ कारे	५५	१०६
तजु मनमानी मन मेरे	६	११
तुम ते न कम हम सुनु बनवारी	२२	४२
तुमहिँ श्याम इक मेरे	२४	४६
तू अति भोरी मैया	५६	१०८

तू नहिं मोरी मैया	३९	७६
तू प्रियतम मैं प्यारी	२८	५४
तू मम तव मैं कान्हा	८	१४
तू मेरा मैं तेरा	७	१३
तू ही इक दाता राधे	८६	१६२
तू ही तो है मेरी गति राधे	८८	१६६
तू ही दाता राधे	८९	१६७
तू ही मेरा तू ही मेरा कान्हा	१८	३५
तू ही मेरी तू ही मेरी राधे	८७	१६४
तू ही मेरी राधा	७०	१३३
तेरी यारी में मैं मारी गई बनवारी	५७	११०
तेरी ही तो हूँ मैं राधे	९०	१६९
तोरे सँग खेलूँ नहिं कान्हा	३८	७४
दीनबंधु गुन भाये कान्हा	३०	५८
दोउ इक प्रियतम प्यारी	४	८
दोउ ठाकुर श्यामा श्याम	१	१
दोष सबै मम श्यामा	९१	१७०
धन-धन गोपीजन	१५	२९
धनि धनि यशुमति मैया	३१	६०
धनि बनवारी तोरी-यारी	५८	१११
नटवारी छवि प्यारी	४३	८३
नथवारी पर वारी	८१	१५२
ना री जाने यारी वारी वारी बनवारी	५९	११३
निज घर चोरी कर कान्हा	४०	७७

बाँधे मति ऊखल मैया	३७	७१
भोरी भारी प्यारी प्यारी प्यारी	७९	१४८
मति बाँधे मोहिं मैया	३६	६९
मन ते तो सब हारे	१३	२६
मम ठाकुर नंद कुमार	२	४
मम ठाकुर श्यामा श्याम	३	५
महल टहल दे राधे	९२	१७२
मातु जगावत कान्हा	३२	६२
मेरी ठकुरानी रानी राधे	९३	१७४
मेरी बरसाने वारी प्यारी	७७	१४५
मैं तो लुटि गई लुटि गई हाय दैया	६०	११५
मोरिहु सुनु टुक मैया	६१	११७
मो सम पतित न राधे	९४	१७६
यह अचरज सुनु कान्हा कान्हा कान्हा	१४	२८
ये अस गूजरि मैया	६२	११९
राधा सम हैं राधा	७२	१३७
रूप रूप रस राधे	७८	१४७
लखि न जात छवि कान्हा	६३	१२१
लखु ब्रज अचरज ज्ञानी	९	१६
लागी नहिं छूटे अब कान्हा	१६	३२
वरदे वर दे राधे	९५	१७७
वारी बनवारी लखि प्यारी	८२	१५५
वारी बनवारी पर वारी	४४	८५
श्याम पियत रस राधे	९६	१८०

सखि कै गयो बंटाढार यार	६४	१२३
सुन रे कन्हैया कह मैया	४१	७९
सुनु अनहोनी होनी भई आजु सखी	९९	१८५
सुनु मन लक्षण प्रेमी	२३	४४
सुनु सुनु सुनु माँ श्यामा	९७	१८१
सोचति मन मन मैया	३५	६७
हरि लै गयो सोइ मम प्रान सखी	९८	१८३
हैं अस ग्वालिनि मैया	६५	१२५
हैं प्रेमसुधा राधा	७३	१३८
होड़ परी पिय प्यारी	१००	१८६

१

दोउ ठाकुर श्यामा श्याम, दोउ कोटि काम अभिराम।
दोउ सुखघन पूरनकाम, विहरत वृंदावन धाम॥
दोउ प्रेम सिंधु सुखधाम, दोउ रूपसिंधु अभिराम।
दोउ ब्रजरस सिंधु ललाम, विहरत वृंदावन धाम॥
दोउ इक नित श्यामा श्याम, दोउ भज दोउ आठौं याम।
दोउ सेवत दोउ अविराम, विहरत वृंदावन धाम॥
दोउ मोहे दोउ छविधाम, दोउ पूर्णकाम अभिराम।
दोउ एक ब्रह्म द्वै नाम, विहरत वृंदावन धाम॥
दोउ गावत नित दोउ नाम, दोउ ध्यावत दोउ अविराम।

दोउ चह दोउ सुख वसु याम, विहरत वृंदावन धाम॥
दोउ दीनबंधु सुखधाम, दोउ आप्तकाम अभिराम।
दोउ भक्तवश्य वसु याम, विहरत वृंदावन धाम॥
दोउ नित्यवास ब्रजधाम, दोउ करत रास अविराम।
दोउ सँग रह नित ब्रजबाम, विहरत वृंदावन धाम॥
दोउ रस स्वरूप अभिराम, दोउ रसिक मुकुट अभिराम।
दोउ मधु दोउ मधुप ललाम, विहरत वृंदावन धाम॥
दोउ तनु चिन्मय सुखधाम, दोउ अवतारी अभिराम।
दोउ लीला दिव्य ललाम, विहरत वृंदावन धाम॥
दोउ तनु बह रस अविराम, दोउ सम दोउ श्यामा श्याम।
दोउ जीवनधन ब्रजबाम, विहरत 'कृपालु' ब्रजधाम॥

भावार्थ— मेरे ठाकुर श्यामा-श्याम करोड़ों कामदेवों से भी अधिक कमनीय हैं। दोनों ही चितघन सुखघन स्वरूप हैं। दोनों नित्य दिव्य वृन्दावन धाम में विहार करते हैं। दोनों सुख की खान हैं। प्रेम के समुद्र हैं। अभिराम श्यामा श्याम रूप के समुद्र हैं। दोनों ही सुन्दर ब्रजरस के सागर हैं। ऐसे दिव्य युगल नित्य वृन्दावन में विहार करते रहते हैं। ये श्यामा श्याम नित्य एक ही हैं। दोनों ही रात दिन दोनों की आराधना करते हैं। निरन्तर परस्पर सेवा-भावना से युक्त होकर श्री वृन्दावन धाम में विहार करते हैं। दोनों ही अपनी अनन्त शोभा राशि से दोनों को मोह लेते हैं। सुन्दर श्यामा-श्याम पूर्णकाम हैं। नाम मात्र के लिये ही ये दो हैं। वस्तुतः तो पूर्णब्रह्म ये दोनों एक ही हैं। वृन्दावन इनकी विहारस्थली हैं। निरन्तर परस्पर एक दूसरे

के नाम का गायन करते हैं। अविरल एक दूसरे का ध्यान करते हैं। दोनों ही दोनों का सुख चाहते हैं। ऐसे दिव्य युगल नित्य वृन्दावन में विहार करते हैं। सुख की राशिस्वरूप श्यामा-श्याम दीनों पर कृपा करते हैं।दोनों ही आप्तकाम हैं(कामना रहित)। दोनों ही सदा भक्तों की भक्ति के वशीभूत रहते हैं। ऐसे अलौकिक स्वरूपयुक्त श्यामा-श्याम नित्य वृन्दावन में विहार करते रहते हैं। ब्रजमंडल में दोनों का नित्य निवास है। दोनों ही निरन्तर रास-रस की वर्षा करते रहते हैं। ब्रजांगनायें इन दोनों के साथ साथ रहकर इनकी लीला में सहायता करती हैं। ये श्यामा श्याम सदा वृन्दावन में विहार करते हैं। अभिराम श्यामा श्याम रस रूप ही हैं। दोनों ही रसिकों के भी मुकुट मणि हैं। दोनों ही मधु एवं मधुप भी हैं। ऐसे ललित, युगल सरकार सदा ही वृन्दावन में विहार करते हैं। दोनों का शरीर सुख समूह एवं चिन्मय है। दोनों ही अवतारी स्वरूप हैं। दोनों की लीलायें दिव्य एवं मनोहर हैं। ये श्यामा-श्याम सदा वृन्दावन में विहार करते हैं। दोनों के दिव्य शरीर से रस की धारा अनवरत प्रवाहित होती रहती है। दोनों के समान दोनों ही हैं। दोनों ही ब्रज-गोपियों के जीवन-सर्वस्व हैं। ये युगल-सरकार सदा ही वृन्दावन धाम को विहार-स्थली बनाते हैं।

२

मम ठाकुर नंदकुमार, मम ठकुरानी सुकुमार।
मम दोऊ प्राणाधार, जय जयति युगल सरकार॥
बस नंदगाम रिझवार, बस बरसानो सुकुमार।
वृंदावन करत बिहार, जय जयति युगल सरकार॥
नीलो तनु नंदकुमार, पीलो तनु भानुदुलार।
दोउ चित सुख घन तन धार, जय जयति युगल सरकार॥
पीलो पट नंदकुमार, नीलो पट भानुदुलार।
दोउ लीला अपरंपार, जय जयति युगल सरकार॥
नट भेष ब्रजेन्द्र कुमार, सोरह सिँगार सुकुमार।
दोउ भल गलबाहीँ डार, जय जयति युगल सरकार॥
दोउ ब्रह्मरूप साकार, दोउ दिव्य प्रेम अवतार।
दोउ रूप सुधा रस सार, जय जयति युगल सरकार॥
भज प्यारिहिँ नंदकुमार, भज प्यारिहुँ पिय रिझवार।
दोउ सुख महँ दोउ बलिहार, जय जयति युगल सरकार॥
दोउ छवि पर छवि बलिहार, दोउ निज मन मोहनहार।
दोउ तनु बह ब्रजरस धार, दोउ मम 'कृपालु' सरकार॥

भावार्थ— भक्त कहता है-मेरे आराध्य नंदनंदन श्री कृष्ण हैं। मेरी आराध्या सुकुमारी राधा हैं। दोनों ही मेरे प्राणों के अवलम्ब हैं। युगल सरकार की सदा ही जय हो। श्री कृष्ण नंदग्राम में निवास करते हैं। श्री राधा ने बरसाना धाम अपना वासस्थल बनाया है। वृन्दावन दोनों की विहार स्थली है। युगल

सरकार सदा जय को प्राप्त हो। नंदनंदन का दिव्य वपु नील वर्ण का है। भानुनन्दिनी का चिन्मय तनु पीत वर्ण का है। दोनों का ही शरीर चित एवं सुखघन रूप है। युगल सरकार की सदैव विजय हो। नंदनंदन पीत वस्त्र धारण करते हैं। भानुनन्दिनी को नीले रंग की साड़ी प्रिय है। दोनों की लीला अपार है। युगल सरकार की सदा जय हो। ब्रजेन्द्रनंदन नटवर वेष से सुशोभित होते हैं। श्री राधा सोलह शृंगार से युक्त हैं। गलबाँहीं देकर दोनों अतीव शोभा को प्राप्त हो रहे हैं। युगल सरकार की जय हो। दोनों ही साक्षात् ब्रह्मस्वरूप हैं। दोनों ही दिव्य प्रेम के अवतार हैं। दोनों का रूप अमृत का सार स्वरूप है। युगल सरकार की जय हो। नंदपुत्र श्री राधा का सेवन करते हैं। श्री राधा रसिक शेखर श्री कृष्ण की उपासना करती हैं। दोनों दोनों के सुख पर बलिहार जाते हैं। युगल सरकार की जय हो। दोनों के सौन्दर्य को देखकर सौन्दर्य बलिहार जाता है। दोनों अपने ही मन को मोहित करते हैं। दोनों के शरीर से ब्रजरस की धारा प्रवाहित होती रहती है। '**कृपालु**' कहते हैं- दोनों ही मेरे इष्ट हैं।

३

मम ठाकुर श्यामा श्याम, दोउ पूर्णब्रह्म सुखधाम।
दोउ पूर्णकाम अभिराम, राजत वृंदावन धाम॥
श्यामा सेवा चह श्याम, श्यामा चह सेवा श्याम।

दोउ चह दोउ सुख वसु याम, राजत वृंदावन धाम॥
आनँदघन श्यामा श्याम, आनँदघन तन अभिराम।
सुख को दे सुख सुखधाम, राजत वृंदावन धाम॥
नँदगाम धाम घनश्याम, बरसानो श्यामा धाम।
सँग सखन सखिन वसु याम, राजत वृंदावन धाम॥
तनु नील वरन घनश्याम, तनु गोरी श्यामा बाम।
दोउ एक रूप द्वै नाम, राजत वृंदावन धाम॥
चंचल ते चंचल श्याम, अति भोरी श्यामा बाम।
दोउ रिझवत दोउ वसु याम, राजत वृंदावन धाम॥
दोउ प्रेमसिंधु सुखधाम, दोउ कृपा सिंधु अभिराम।
दोउ दीनबंधु छविधाम, राजत वृंदावन धाम॥
श्यामा को भजु कह श्याम, श्यामा कह भजु घनश्याम।
सखि कह भजु दोउ वसु याम, राजत वृंदावन धाम॥
दोउ रस हैं श्यामा श्याम, दोउ रसिक प्रेम अभिराम।
दोउ जीवन धन ब्रजबाम, राजत 'कृपालु' ब्रजधाम॥

भावार्थ— मेरे आराध्य श्यामा श्याम हैं। दोनों ही सुखसागर हैं। पूर्णब्रह्म स्वरूप हैं। अत्यन्त ही शोभाशाली हैं। समस्त लौकिक वासनाओं से रहित हैं। स्वयं में ही परिपूर्ण हैं। ऐसे युगल सरकार दिव्य वृन्दावन धाम में विराजमान हैं। श्यामसुन्दर सदैव श्री राधा की सेवा-हेतु उत्कंठित रहते हैं। श्री राधा भी निरन्तर प्रियतम की सेवा-वासना से चिंतित रहती हैं। रात-दिन दोनों ही दोनों को सुख देने को तत्पर रहते हैं। ऐसे प्रेमावतार युगल सरकार सदा वृन्दावन धाम में शोभित होते हैं।

श्यामा श्याम आनन्दघन स्वरूप हैं। उनका शरीर और उनकी आत्मा एक ही हैं अर्थात् वे देह देही के अन्तर से रहित हैं। ये सुख को भी सुख प्रदान करने वाले स्वयं सुख स्वरूप ही हैं। ऐसे युगल सरकार सदा सदा वृन्दावन धाम में विराजमान रहते हैं। लीला की दृष्टि से नंदनंदन श्री कृष्ण ने नंदग्राम में वास किया। भानुनन्दिनी राधा ने बरसाना ग्राम को अपनी क्रीड़ा स्थली बनाया। श्री कृष्ण के साथ श्रीदामा, मधुमंगल आदि सखा एवं श्री राधा के साथ ललिता, विशाखा आदि सखियाँ सदा ही वृन्दावन धाम में रहकर युगल सरकार की लीला में सहयोग प्रदान करते हैं। श्री कृष्ण का शरीर नील वर्ण का है श्री राधा गौर वर्ण की हैं। दोनों के नाम ही पृथक् पृथक् हैं। तत्वत: तो दोनों एक ही रूप हैं। ऐसे युगल सरकार वृन्दावन में नित्य ही विराजमान हैं। श्यामसुन्दर अत्यंत चंचल हैं। श्री राधा अत्यंत भोली हैं। दोनों की प्रत्येक चेष्टा दोनों की प्रसन्नता के हेतु ही होती है। ऐसे श्यामा श्याम सदा वृन्दावन धाम में निवास करते हैं। सुख के धाम श्यामा श्याम प्रेम के समुद्र हैं। यह अभिनव जोड़ी कृपा की भी सागर है। छवि की खान श्यामा श्याम अनन्त दिव्य कल्याणमय गुण गण युक्त होकर भी सदा दीनों को अपनाते रहते हैं। श्यामसुन्दर कहते हैं कि राधा की उपासना करो। श्री राधा की अनुमति से श्री कृष्ण का भजन करणीय है। ब्रजांगनाओं की दृष्टि से तो नित्य वृन्दावन धाम में विराजमान युगल सरकार ही भजनीय हैं। श्यामा-श्याम दोनों ही रस-रूप होकर भी रस के रसिक भी हैं। दोनों ही शुद्ध प्रेम के पिपासु हैं।

दोनों ही ब्रज-गोपियों के जीवन-सर्वस्व हैं। ये युगल-सरकार नित्य ब्रजमंडल में विचरण करते रहते हैं।

४

दोउ इक प्रियतम प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
जोइ हैं प्रियतम सोइ हैं प्यारी,
सोइ प्रियतम जोइ प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
पिय को रूप कबहुँ धर प्यारी,
कबहुँ बने पिय प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
हैं कपूर सम पिय बनवारी,
हैं सुगंध सम प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
कस्तूरी सम पिय बनवारी,
हैं सुगंध जनु प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
दुग्ध सदृश हैं पिय बनवारी,
सदृश श्वेतिमा प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
अग्नि सदृश हैं पिय वनवारी,
शक्ति दाहिका प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
प्यारिहिं सेवा कर बनवारी,
पिय सेवा कर प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
मन बुधि प्रान एक पिय प्यारी,
तनु द्वै प्रियतम प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
यदपि एक प्यारी बनवारी,
रसिक पक्ष लें प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।

मम ठाकुर 'कृपालु' बनवारी,
मम ठकुरानी प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।

भावार्थ— भक्त अपने भाव प्रकट करते हुए कहता है- प्रियतम कृष्ण एवं प्रिया राधा दोनो तत्वतः एक ही हैं। जो कृष्ण हैं वही राधा हैं जो राधा हैं वही कृष्ण हैं। कभी राधा कृष्ण का रूप धारण कर लेती हैं तो कभी कृष्ण राधा का रूप धारण कर लेते हैं। प्रियतम कृष्ण कपूर के समान हैं प्रिया राधा कपूर की सुगंध हैं। प्रियतम कृष्ण कस्तूरी के समान और प्रिया राधा उस कस्तूरी की गंध हैं। कृष्ण दूध हैं राधा उस दूध की श्वेतिमा हैं। कृष्ण अग्नि के समान हैं, राधा उस अग्नि की दाहिका शक्ति हैं। कृष्ण राधा की सेवा करते हैं, राधा कृष्ण की सेवा करती हैं। प्रिया-प्रियतम के मन, बुद्धि एवं प्राण एक ही हैं केवल शरीर दो हैं। यद्यपि प्रिया-प्रियतम एक ही हैं किंतु रस की दृष्टि से रसिक सन्त श्री राधा के पक्षपाती हैं। **'कृपालु'** कहते हैं- मेरे आराध्य श्री कृष्ण एवं आराध्या श्री राधा हैं।

५

को कह सम पिय प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
द्वै बापन वारो बनवारी,
भानुदुलारी प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
कारो कारो तन बनवारी,
गोरी गोरी प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।

मोर मुकुट सिर धर बनवारी,
कनक मुकुट सिर प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
गुंजमाल गर बिच बनवारी,
मोतिन लर गर प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
कंध लकुटि नट तन बनवारी,
सब सिँगार तन प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
कुलिश कठोर हृदय बनवारी,
अति कोमल उर प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
अगनित प्यारी युत बनवारी,
पिय अनन्य व्रत प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
चरण पलोटत नित बनवारी,
पलुटावति पग प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
याचत भीख प्रेम बनवारी,
देति भीख तेहिं प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
ब्रजवासिन तजि गये बनवारी,
नित्यवास ब्रज प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
आराधक 'कृपालु' बनवारी,
आराध्या मम प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।

भावार्थ— रसिक भक्त अपनी विलक्षण रीति से श्री राधा की महत्ता प्रकाशित करते हैं- कौन कहता है-श्री कृष्ण राधा के समान हैं ? कहाँ तो दो पिता (वसुदेव एवं नंद) के पुत्र कहलाने वाले कृष्ण एवं कहाँ भानु भूप के कुल में उत्पन्न हुई राजकुमारी राधा, वनों में विचरण करने वाले कृष्ण का रंग तो काला है, महलों में रहने वाली राधा अत्यन्त गौर वर्ण की हैं।

कृष्ण तो वन में पड़े हुए मयूर पुच्छ को सिर पर धारण कर लेते हैं परन्तु श्री राधा के शीश पर स्वर्ण मुकुट सुशोभित होता है। कहाँ तो कृष्ण के कण्ठ में घुँघुची की माला और कहाँ भानुनन्दिनी के गले का बहुमूल्य मुक्ताहार! नटवर कृष्ण के कंधे पर लकुटी रखी है परन्तु श्री राधा तो सोलहों शृंगार से युक्त है। श्री कृष्ण वज्र के समान कठोर हृदय के हैं किंतु श्री राधा का हृदय तो अत्यन्त ही कोमल है। श्री कृष्ण बहुवल्लभ हैं। श्री राधा का प्रेम अनन्य है वे केवल कृष्णव्रता ही हैं। कहाँ तो सुकुमारी राधा के चरण दबाने वाले कृष्ण एवं कहाँ प्रियतम से चरण दबवाने वाली अत्यन्त गौरवमयी राधा! दोनों समान कैसे हो सकते हैं? श्री कृष्ण सदा श्री राधा के द्वार के प्रेम-भिक्षुक हैं। श्री राधा उन्हें सदैव प्रेम-दान देती हैं। श्री कृष्ण निष्ठुर बनकर ब्रज-वासियों को त्यागकर मथुरा एवं मथुरा से द्वारिका चले गये परन्तु श्री राधा तो सर्वदा ब्रज में ही निवास करती हैं **'कृपालु'** जी कहते हैं कि सबसे महत्वपूर्ण अन्तर तो दोनों में यह है कि श्री राधा पूर्णब्रह्म श्रीकृष्ण की आराधिका हैं। अतः दोनों समान नहीं हैं। श्री राधा का स्थान उच्च है।

६

तजु मनमानी मन मेरे, मेरे मेरे मेरे।
सुत वित तिय पति नहिं कोउ तेरे,
सब स्वारथ के चेरे, मेरे मेरे मेरे।

जो यह कहत रहत 'तुम मेरे',
सपनेहुँ ये नहिं तेरे, मेरे मेरे मेरे।
स्वारथ हित सब कह 'तुम मेरे,
दास बने सब तेरे, मेरे मेरे मेरे।
लख जब स्वार्थ हानि ढिंग तेरे,
भूलत मेरे मेरे, मेरे मेरे मेरे।
सबै भिखारी जे कह मेरे,
कोउ न काम के तेरे,मेरे मेरे मेरे।
तू है हरि का, हरि हैं तेरे,
उनहिं मान 'तू मेरे, मेरे मेरे मेरे।
वे हरि रहत सदा उर तेरे,
बनि जा उनहिंन चेरे, मेरे मेरे मेरे।
उर न काम रह नेकहुँ तेरे,
ये सब माया चेरे, मेरे मेरे मेरे।
सार 'कृपालु' एक हरि तेरे,
वचन मानु मन मेरे, मेरे मेरे मेरे।

भावार्थ—हे मेरे मन! अब मनमानी करना छोड़ दे। पुत्र, धन, स्त्री-पति आदि कोई भी तेरा नहीं है। सब अपने स्वार्थ से ही संबंध जोड़ते हैं। जो तुझसे कहते हैं- 'तुम मेरे' हो, वे कभी स्वप्न में भी तेरा साथ नहीं देंगे। जब तक स्वार्थ पूर्ति होती है तभी तक ये तेरी गुलामी करेंगे। जब किंचित् भी स्वार्थ-हानि होगी तब ये तुझे अपना मानना छोड़ देंगे। "सुर नर मुनि सबकी यह रीती, स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती।"

जिन्हें तू अपना समझता है वे तो स्वयं ही भिखारी हैं। वे तेरे किस काम आयेंगे। तू हरि का है, श्री हरि ही तेरे हैं, उन परम कृपालु श्री हरि को ही अपना मान। वे हरि तो सदा तेरे हृदय में ही स्थित हैं। तू उनका ही दास बन जा। किसी भी प्रकार की कामना को हृदय में स्थान ना दे। काम आदि तो माया के नौकर चाकर हैं। '**कृपालु**' कहते हैं- हे मेरे मन! मेरी बात मान। समस्त वेद शास्त्र एवं संतों की वाणी का यही सार है कि एकमात्र श्री हरि ही तेरे हैं, अन्य कोई नहीं।

७

तू मेरा मैं तेरा, तेरा तेरा तेरा।
मैं हूँ अंश सनातन तेरा,
तू है अंशी मेरा, तेरा तेरा तेरा।
मैं हूँ नित्य दास हरि तेरा,
तू ही स्वामी मेरा, तेरा तेरा तेरा।
मैं हूँ नित्य सखा हरि तेरा,
सखा सदा तू मेरा, तेरा तेरा तेरा।
मैं हूँ मात पिता हरि तेरा,
तू भी है सुत मेरा, तेरा तेरा तेरा।
मैं हूँ प्रिया, पिया तू मेरा,
मेरा सब कुछ तेरा, तेरा तेरा तेरा।
मम तनु दिया हुआ है तेरा,
तेरा ही मन मेरा, तेरा तेरा तेरा।

मेरा प्राण देह है तेरा,
तू देही है मेरा, तेरा तेरा तेरा।
सारा जग ही तो है तेरा,
कछू नाहिं कहुँ मेरा, तेरा तेरा तेरा।
यदपि 'कृपालु' जान सब तेरा,
तदपि मान सब मेरा, तेरा तेरा तेरा।

भावार्थ— भक्त कहता है- हे कृष्ण! तुम मेरे हो,मैं तुम्हारा हूँ। तुम्हारे कथनानुसार-''ममैवांशो जीवलोके-----।'' मैं सदा से ही तुम्हारा अंश हूँ। तुम मेरे अंशी हो। हे हरि! मैं सदा तुम्हारा दास हूँ, तुम ही एकमात्र मेरे स्वामी हो। मैं सदा से तुम्हारा मित्र हूँ तुम सदा सदा मेरे मित्र हो। मैं तुम्हारा माता पिता हूँ तुम मेरे पुत्र हो। मैं तुम्हारी प्रेयसी हूँ, तुम मेरे प्रियतम हो। मेरा सर्वस्व तुम्हारा है। मेरा शरीर तुम्हारा ही दिया हुआ है। मेरा मन भी एकमात्र तुम्हारा ही है। मेरी आत्मा तुम्हारा शरीर है, तुम मेरी आत्मा की आत्मा हो। सारा विश्व तुम्हारा ही तो है। मेरा तो कहीं भी कुछ नहीं है। **'कृपालु'** कहते हैं कि यद्यपि सभी मनुष्य जानते तो हैं कि सब कुछ भगवान् का ही है परन्तु मानते नहीं हैं। मानते तो यही हैं कि सब कुछ हमारा है।

८

तू मम तव मैं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
मात पिता भ्राता तू कान्हा,

कहत वेद तव कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
स्वामि सखा सुत पति तू कान्हा,
यह हूँ श्रुति कह कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
अंश चराचर अंशी कान्हा,
पुनि पुनि कह श्रुति कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
पुनि सब उर बस नित तू कान्हा,
पुनि जग व्यापक कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
जनि बनु निराकार तुम कान्हा,
नराकार बनु कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
बारेक मोहिं लगा ले कान्हा,
निज सीने ते कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
माया लोक न माँगूँ कान्हा,
गोलोकहुँ नहिं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
गोपीप्रेम देहु मोहि कान्हा,
घटि न जाय कछु कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
देर किये ते हौं नहिं कान्हा,
छोड़ूँ पाछा कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
अब जान्यों 'कृपालु' हौं कान्हा,
'तू मम' 'तव मैं' कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा॥

भावार्थ— हे कृष्ण! तू मेरा है, मैं तेरा हूँ। तू ही मेरी माता है, तू ही पिता है, तू ही भाई है। इस बात को मैं ही नहीं कह रहा हूँ, तुम्हारा वेद कह रहा है। हे कृष्ण! तुम ही मेरे स्वामी हो, तुम ही सखा हो, तुम ही पुत्र हो एवं तुम ही पति

हो। यह सिद्धान्त भी वेद ही बताता है। तुम्हारा वेद बार बार कह रहा है कि चराचर जगत् तुम्हारा अंश है तुम उसके अंशी हो। तुम सबके हृदय में भी रहते हो, संसार में व्यापक भी हो। हे श्रीकृष्ण! तुम निराकार मत बनो नराकार ही बने रहो। हे कृष्ण! एक बार मुझे अपने हृदय से लगा लो। मैं तुमसे माया का कोई संसार नहीं माँगता, तुम्हारा गोलोक धाम भी मैं तुमसे नहीं चाहता। मुझे गोपीप्रेम प्रदान कर दो। तुम्हारे भंडार में कोई अभाव नहीं होगा। यदि तुम मुझे प्रेम देने में विलम्ब करते हो तो भी मैं तुम्हारा पीछा छोड़ने वाला नहीं हूँ। '**कृपालु**' कहते हैं–अब मैं समझ गया कि तुम 'मेरे हो' 'मैं तुम्हारा हूँ।'

९

लखु ब्रज अचरज ज्ञानी, ज्ञानी ज्ञानी ज्ञानी।
जेहि कह ब्रह्म अजन्मा ज्ञानी,
सोइ नँदनंदन ज्ञानी, ज्ञानी ज्ञानी ज्ञानी।
जेहि कह ब्रह्म अतनु सो ज्ञानी,
धर ब्रज नरतनु ज्ञानी, ज्ञानी ज्ञानी ज्ञानी।
जेहि निर्लेप ब्रह्म कह ज्ञानी,
सोइ गोपिन विट ज्ञानी, ज्ञानी ज्ञानी ज्ञानी।
जेहि आनंद ब्रह्म कह ज्ञानी,
सोइ रोवत ब्रज ज्ञानी, ज्ञानी ज्ञानी ज्ञानी।
जेहि सर्वज्ञ ब्रह्म कह ज्ञानी,

सोइ पढ़ क ख ग घ ज्ञानी, ज्ञानी ज्ञानी ज्ञानी।
जेहि कह ब्रह्म निरंजन ज्ञानी,
अंजन गोपिन ज्ञानी, ज्ञानी ज्ञानी ज्ञानी।
जेहि कह पूर्णकाम सब ज्ञानी,
सोइ कामी ब्रज ज्ञानी, ज्ञानी ज्ञानी ज्ञानी।
जेहि अदृष्ट कहि गावत ज्ञानी,
तेहि ब्रज सब लख ज्ञानी, ज्ञानी ज्ञानी ज्ञानी।
जेहि कह व्यापक बाँध्यो ज्ञानी,
यशुमति ऊखल ज्ञानी, ज्ञानी ज्ञानी ज्ञानी।
जेहि कह जग चालक सोइ ज्ञानी,
सिखत चलन ब्रज ज्ञानी, ज्ञानी ज्ञानी ज्ञानी।
अधकचरे 'कृपालु' सब ज्ञानी,
अज्ञानी हैं ज्ञानी, ज्ञानी ज्ञानी ज्ञानी॥

भावार्थ— हे ज्ञानियों! तनिक ब्रज में आकर परम आश्चर्य को देखो। हे ज्ञानियों! जिसे तुम अजन्मा कहते हो, वह तो नन्द का पुत्र बना है। जिसे तुम अतनु ब्रह्म कहते हो, उसने ब्रज में नरवपु धारण किया है। हे ज्ञानियों! जिस ब्रह्म को तुम निर्लेप कहते हो, वह तो ब्रज में गोपियों का दास बना है। जिसे तुम आनन्द ब्रह्म कहते हो, वह ब्रज में यशोदा की गोद में जाने को रो रहा है। हे ज्ञानियों! जिसे तुम सर्वज्ञ ब्रह्म कहते हो, वह उज्जैन जाकर गुरु के निकट क, ख, ग पढ़ना सीख रहा है। जिस ब्रह्म को तुम निरंजन कहते हो, वह गोपियों के नेत्रों का अंजन बना है। जिसे सब ज्ञानीजन पूर्णकाम कहते हैं वह ब्रज

में गोपियों के प्रति कामी बना है। ज्ञानी जिसे अदृष्ट कहते हैं उसे तो ब्रज में सभी देख रहे हैं। जिसे ज्ञानी व्यापक कहते हैं, उसे यशोदा ने ऊखल से बाँध दिया। जिसे सब ज्ञानी जगत् को चलाने वाला कहते हैं, वह ब्रज में चलना सीख रहा है। '**कृपालु**' कहते हैं- ये सब ज्ञानी अधूरे ज्ञानी हैं जिन्हें ब्रह्म के पूर्ण रूप का ज्ञान नहीं है। ब्रह्म तो विरोधी गुणों से परिपूर्ण है अतः वह तो "अजायमानो बहुधा विजायते" है। वह निराकार होते हुए भी साकार है। वह आत्माराम होकर भी प्रेमियों के साथ विहार करता है। ब्रह्म आनन्द रूप होकर भी सीता के वियोग में दुखी होता है। वह सर्वज्ञ होकर भी पशु-पक्षियों से अपनी प्राण प्रिया जानकी के विषय में जानना चाहता है-

'हे खग मृग, हे मधुकर स्रेनी। तुम देखी सीता मृगनैनी।'

ज्ञानियों के पूर्णकाम ब्रह्म ने रास विलास करने की इच्छा से ब्रज में वंशी बजाकर ब्रजांगनाओं को अपने निकट बुलाया-

"भगवानपि ता रात्रिः-------"

ज्ञानियों का अदृष्ट ब्रह्म अपने भक्तों के नेत्रों का विषय बन जाता है। ज्ञानियों का व्यापक ब्रह्म एकदेशीय बनकर प्रेम के कारण ऊखल बन्धन की लीला का आयोजन करता है। प्रेम के कारण ही जगत-चालक को यशोदा उँगली पकड़कर चलना सिखाती है। वस्तुतः ज्ञान का फल प्रेम है। प्रेम के अभाव में ज्ञान अपूर्ण है।

१०

कैसे कोउ जाने तोहिं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तू तो महायोगी महाभोगी भी है कान्हा,
कर्ता भी अकर्ता भी है कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तू तो अविभक्त विभक्त भी है कान्हा,
दृश्य भी अदृश्य भी है कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तू तो परिच्छिन्न भी है विभु भी है कान्हा,
निरपेक्ष सापेक्ष कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तू तो पूर्णकाम भी सकाम भी है कान्हा,
जन्मा अजन्मा भी कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तू तो भक्तवश भी स्वतंत्र भी है कान्हा,
भोरा भी चतुर भी है कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तू तो बद्ध भी है नित्यमुक्त भी है कान्हा,
दीन भी अदीन भी है कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तू तो अप्रमेय भी प्रमेय भी है कान्हा,
गम्य भी अगम्य भी है कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तू तो नित्यतृप्त भी है भूखा भी है कान्हा,
एक भी अनेक भी है कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तू तो जग में भी जग ते परे भी कान्हा,
अज्ञ भी है विज्ञ भी है कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तू तो निराकार साकार भी है कान्हा,
निर्गुण सगुण भी कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तू तो अग्राह्य भी है ग्राह्य भी है कान्हा,

चिन्त्य भी अचिन्त्य भी है कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तू तो है 'कृपालु' अरु न्यायी भी है कान्हा,
तोको जाने तू ही बस कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा॥

भावार्थ— भक्त भगवान् से कहता है- हे कृष्ण! तुम्हें कोई कैसे जान सकता है। तुम्हारे विरोधी गुणों के कारण तुम्हारे कार्य साधारण जीव नहीं समझ सकता। तुम महायोगी भी हो, महाभोगी भी हो। द्वारिका में सोलह हजार एक सौ आठ विवाह कर प्रत्येक पत्नी से दस पुत्र उत्पन्न किये। इतने बड़े परिवार को अपने नेत्रों के समक्ष नष्ट होते देखकर भी तुम विषाद की छाया से मुक्त रहे। तुम सृष्टि-रचना, पालन आदि का कार्य करते हुए भी अकर्ता ही रहते हो। कारण तुम कर्तृत्व अभिमान से रहित हो। तुम एक समय में ही अविभक्त एवं विभक्त भी रहते हो। तुम एक ही हो, तुम्हारे खंड नहीं होते। अतः अविभक्त हो किन्तु सबके हृदय में अलग अलग बैठकर उनके कर्मों के दृष्टा बने रहते हो। यह रूप विभक्त सा जान पड़ता है। भक्ति और श्रद्धा के नेत्रों से ही तुम्हारा दर्शन होता है, अतः तुम दृश्य हो किन्तु श्रद्धारहित अभक्त के लिये तुम अदृश्य ही रहते हो। तुम एकदेशीय भी हो साथ ही व्यापक भी हो। तुम्हें किसी की अपेक्षा नहीं इसलिये निरपेक्ष हो किंतु भक्त जनों की अपेक्षा करते हो, अतः सापेक्ष भी हो। तुम पूर्णकाम हो किन्तु भक्तों की इच्छा पूर्ण करने के लिये सकाम बन जाते हो। "भगवानपि ता रात्रिः-----।" वेद कहता है ब्रह्म अजन्मा है किंतु पुनः कहता है वह अनेक प्रकार से जन्म भी लेता है। "अजायमानो बहुधा

विजायते।'' अतः तुम एक समय में जन्मा और अजन्मा दोनों ही रूप से रहते हो। तुम अपने भक्तों के वश में हो ''अहं भक्त पराधीनो'' किंतु सर्वथा स्वतंत्र भी हो। 'परम स्वतन्त्र न सिर पर कोई।' भोले भाले भक्तों के लिये तुम भी भोले भाले हो। चतुरों के लिये तुम महाचतुर हो। तुम बद्ध भी हो। यशोदा ने तुम्हें ऊखल से बाँधकर 'दामोदर' संज्ञा प्रदान की। भक्तों के प्रेम बंधन में तो सदा बँधे रहते हो परन्तु स्वभावतः तुम सदा मुक्त ही हो। अभिमानगलित हो गया है जिनका, ऐसे भक्तों के समक्ष दीन बनकर उनकी दासता करते हो। वैसे तो तुम सर्वथा अदीन ही हो। तुम्हें प्रमाणित नहीं किया जा सकता। इसलिये अप्रमेय हो किंतु भक्ति शास्त्र तुम्हें प्रमाणित भी करते हैं अतः प्रमेय भी हो। श्रद्धा और विश्वास द्वारा जीव तुम्हें प्राप्त कर लेता है। नास्तिक के लिये तुम सर्वथा अगम्य हो तुम पूर्णकाम होने के कारण स्वभावतः तृप्त हो। भक्तों द्वारा निवेदित सूखा साग, केले के छिलके, जूठे बेर खा लेते हो, अतः भूखे भी हो। तुम एक हो परन्तु महारास में असंख्य गोपियों के लिये असंख्यों रूप धारण कर लेते हो, अतः अनेक भी हो। तुम सम्पूर्ण जगत् में व्यापक हो एवं जगत् से अतीत भी हो। सर्वज्ञ होकर नर रूप से अल्पज्ञता का नाटक करते हो, अतः तुम अज्ञ और विज्ञ दोनों ही हो। रामावतार में जानकी-हरण के अवसर पर-

''हे खग मृग हे मधुकर स्रेनी तुम देखी सीता मृग नैनी।'' कहते हुए अल्पज्ञ बनकर साधारण मनुष्यों को भ्रमित किया। निराकार रूप से सर्वत्र व्यापक होकर साकार रूप से भी प्रकट

हो जाते हो। तुम प्राकृत गुणों से रहित होने के कारण निर्गुण हो। अनन्त दिव्य गुणों–करुणा, प्रेम, आनंद से युक्त होने से सगुण भी हो। श्रद्धाहीन मनुष्य द्वारा तुम्हारे दिव्य लीला चरित्र आदि सर्वथा अग्राह्य हैं। श्रद्धावान तुम्हें प्राप्त कर लेता हैं, अतः तुम अग्राह्य एवं ग्राह्य दोनों ही हो। भक्त अपने भावों में तुम्हारे रूप, गुण आदि का अनुभव करते हैं अतः तुम चिंत्य हो। अभक्त प्राकृत इन्द्रिय मन, बुद्धि से तुम्हारा चिंतन नहीं कर सकता, अतः तुम अचिंत्य भी हो। तुम कृपा भी करते हो न्याय भी। भक्तों पर तो सदैव एकमात्र कृपा ही करते हो। ज्ञानी एवं कर्मीं को उनके कर्म का फल देकर न्याय करते हो। विरोधी गुणों के आश्रय होने के कारण तुम्हें केवल तुम ही जानते हो।

११

अब यह जाना कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
प्रेम काम नहिं कबहूँ कान्हा,
काम प्रेम नहिं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
प्रेम प्रकाश सूर्य सम कान्हा,
काम तिमिर सम कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
जो तुम्हरोइ सुख चह नित कान्हा,
शुद्ध प्रेम सोइ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
जो निज सुख ही चह नित कान्हा,
काम नाम तेहि कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
छिन छिन बढ़ै प्रेम नित कान्हा,

काम घटै नित कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
दे अमरत्व प्रेम नित कान्हा,
काम मृत्यु दे कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
परम स्वतंत्र प्रेम रह कान्हा,
जेहि अधीन तुम कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
लख चौरासी बंधन कान्हा,
काम दान कर कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
ज्यों रवि अंधकार दोउ कान्हा,
रहि न सकत सँग कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
त्यों ही प्रेम काम दोउ कान्हा,
सँग नहिं रहि सक कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
प्रेम 'कृपालु' चहत हौं कान्हा,
काम न सपनेहुँ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा॥

भावार्थ— भक्त श्री कृष्ण को सम्बोधित करते हुए कहता है- हे श्री कृष्ण! तुम्हारी कृपा से अब मेरी समझ में यह आ गया कि प्रेम काम नहीं हो सकता एवं काम प्रेम नहीं बन सकता। महाप्रभु चैतन्य देव ने कहा है- "निजेन्द्रिय सुख हेतु कामेर तात्पर्य, कृष्ण सुख तात्पर्य प्रेम तो प्रबल" प्रेम सूर्य के समान प्रकाशमान है एवं काम अन्धकार स्वरूप है। शुद्ध प्रेमी केवल प्रेमास्पद श्री कृष्ण को सुख देना चाहता है। जो अपने सुख की कामना रखता है वह तो कामी ही है। प्रेम प्रतिक्षण वर्धमान होता है। काम क्षण-क्षण न्यूनता को प्राप्त होता है। कामी मृत्यु को एवं प्रेमी अमरत्व को प्राप्त करता है। प्रेम

स्वतन्त्र है- जो तुम्हें भी अपने आधीन कर लेता है। काम तो चौरासी लाख योनियों में भटकाता है। जिस प्रकार सूर्य और अन्धकार एक ही स्थान पर नहीं रह सकते उसी प्रकार प्रेम और काम एक साथ नहीं रह सकते, तुलसी ने कहा है-

"जहाँ राम तहँ काम नहिं, जहाँ काम नहिँ राम।
तुलसी कहु कैसे रहें, रवि रजनी एक ठाम।"

'कृपालु' कहते हैं- श्री कृष्ण मैं तुमसे प्रेम की ही याचना करता हूँ। मुझे स्वप्न में भी काम नहीं चाहिये।

१२

उभय रूप जग जाना, जाना जाना जाना।
इक जग हरि विरचित श्रुति माना,
इक मन कल्पित जाना, जाना जाना जाना।
हरि कहँ परम सत्य श्रुति माना,
जगहुँ सत्य इमि जाना, जाना जाना जाना।
हरि ते प्रकट जगत श्रुति माना,
हरि व्यापक जग जाना, जाना जाना जाना।
हरि में जग का लय श्रुति माना,
इमि जग मृषा न जाना, जाना जाना जाना।
जग को सत्य सबै बुध माना,
पै अनित्य है जाना, जाना जाना जाना।
जिसने जग में ही सुख माना,

उसने जग नहिं जाना, जाना जाना जाना।
इक जग चित्त वासना माना,
सोइ जग मिथ्या जाना, जाना जाना जाना।
ज्ञानी जग मन कल्पित माना,
सत्य ज्ञान नहिं जाना, जाना जाना जाना।
ज्ञानिहुँ भूख प्यास हित माना,
माँगि मधुकरी खाना, जाना जाना जाना।
जिसने हरि में ही सुख माना,
सोइ 'कृपालु' जग जाना, जाना जाना जाना॥

भावार्थ— संसार के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए भक्त कवि कहता है- मैंने भलीभाँति समझ लिया कि दो प्रकार का संसार है। एक तो वेद शास्त्र प्रमाणित श्री हरि द्वारा रचित संसार दूसरा जीव के मन द्वारा कल्पित संसार। जिस प्रकार वेद श्री हरि को त्रिकाल से अतीत परम सत्य स्वरूप बताते हैं। उसी प्रकार श्री हरि द्वारा रचित संसार भी सत्य है। जगत् हरि से प्रकट हुआ है। एवं श्री हरि इस जगत् के कण-कण में व्यापक भी हैं- "ईशावास्य मिदँ् सर्वं-----" श्री हरि में ही सृष्टि का लय भी होता है। इस प्रकार हरि द्वारा प्रकट संसार मिथ्या नहीं है। जगत सत्य है इसे सभी विद्वान् स्वीकार करते हैं किंतु यह श्री हरि के समान नित्य न होकर अनित्य है। जिसने जगत् को सुख स्वरूप माना उसने जगत् के स्वरूप को भली प्रकार से समझा नहीं। दूसरा संसार मन की वासना का स्वरूप है। वही

मिथ्या है। ज्ञानी संसार को मन की कल्पना कहते हैं। किंतु यह ज्ञान भी सत्य नहीं है। ज्ञानी को भी भूख प्यास का अनुभव होता है जिससे वह भिक्षा भी ग्रहण करता है। '**कृपालु**' के शब्दों में जो श्री हरि को ही सुख स्वरूप मानता है वही संसार के स्वरूप को भलीभाँति जान सकता है।

१३

मन से तो सब हारे, हारे हारे हारे।
विश्वामित्र पराशर सारे,
मन ते सब ही हारे, हारे हारे हारे।
योगी जपी तपी हैं हारे,
हारे ऋषि मुनि सारे, हारे हारे हारे।
हारे स्वर्गहुँ के सुर सारे,
सुरपति इन्द्रहुँ हारे, हारे हारे हारे।
आठों सिद्धि, नवों निधि वारे,
हारे मन ते सारे, हारे हारे हारे।
हारे जीवनमुक्तहुँ सारे,
योगीजन भी हारे, हारे हारे हारे।
मायाबद्ध जीव हैं सारे,
चंचल मन ते हारे, हारे हारे हारे।
माया ते हारे हैं सारे,
याते मन ते हारे, हारे हारे हारे।
बिनु हरि अनुकम्पा सब हारे,

विधि हरि हरहूँ सारे, हारे हारे हारे।
जिनके एकमात्र हरि प्यारे,
वे मन ते नहिं हारे, हारे हारे हारे।
हों 'कृपालु' तोहिं जब हरि प्यारे,
तोसों हूँ मन हारे, हारे हारे हारे।

भावार्थ— यह मन सब पर विजय प्राप्त कर लेता है। मन पर कोई भी विजय नहीं प्राप्त कर पाता। विश्वामित्र जैसे तपस्वी काम से पराभूत होकर मेनका से सम्बन्ध स्थापित कर बैठे। क्रोध को न सह सकने के कारण रात्रि में वशिष्ठ की हत्या करने के लिये उनके आश्रम पर पहुँचे। पराशर जैसे महापुरुष मत्स्यगंधा से प्रेम सम्बन्ध जोड़कर वेदव्यास के जन्म का कारण बने। सभी योगी, जपी, तपी एवं ऋषि, मुनि इस मन के समक्ष अपनी पराजय स्वीकार कर लेते हैं। स्वर्ग के देवगण एवं उनके सम्राट् इन्द्र भी मन को नहीं जीत सके। जिन्होंने आठों सिद्धियों एवं नवों निधियों को वश में कर लिया वे भी मन को वश में नहीं कर सके। सभी जीवन्मुक्त एवं योगी-जन भी मन से पराजय स्वीकार कर लेते हैं। फिर मायाबद्ध जीव भला इस चंचल मन को कैसे जीत सकते हैं? मायाधीन होने के कारण सभी जीव मन से पराजित हो जाते हैं। श्री कृष्ण की कृपा के बिना ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव भी इस मन पर अधिकार नहीं कर सकते। जिन्हें एकमात्र श्री हरि ही प्रिय हैं, केवल वे ही इस मन को जीत सकते हैं- जब तुमको श्री हरि प्यारे लगेंगे, तब मन तुमसे हार मान लेगा।

१४

यह अचरज सुनु कान्हा कान्हा कान्हा कान्हा।
श्रुति ने ब्रह्म अजन्मा माना,
सोइ जनमेउ बनि कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
श्रुति ने जगत्पिता जेहि माना,
बन्यो नंदसुत कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
श्रुति ने निराकार जेहि माना,
सोइ धर नरतनु कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
श्रुति ने महाकाल जेहि माना,
सोइ डर साँटिन कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
श्रुति ने भूखरहित जेहि माना,
छाछ माँग सोइ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
श्रुति ने पूर्णकाम जेहि माना,
करत रास सोइ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
श्रुति ने आनँदघन जेहि माना,
सोइ रोवत ब्रज कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
श्रुति ने जग स्वामी जेहि माना,
सखिन दास सोइ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
श्रुति ने नेति नेति जेहि माना,
सोइ घोड़ा बन कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
हौं 'कृपालु' अचरज नहिं माना,
भक्तिवश्य रह कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।

भावार्थ— यह आश्चर्य है या कन्हैया है? वेद जिस ब्रह्म को अजन्मा कहता है वही ब्रह्म कृष्ण के रूप में जन्म धारण करता है। वेद जिसे जगत्पिता कहता है, वही नंद का पुत्र कृष्ण बना है। वेद ने जिसे निराकार ब्रह्म स्वीकार किया है उसी ने कृष्ण के रूप में मानव-शरीर धारण किया है। वेद जिसे महाकाल रूप मानता है वही यशोदा की साँटी देखकर भयभीत होता है, वेद कहता है- ब्रह्म को भूख प्यास नहीं लगती किंतु वही ब्रह्म कृष्ण गोपियों से छाछ की याचना करता है। वेद जिसे पूर्णकाम कहता है-वही ब्रह्म ब्रजगोपियों के साथ रास-विहार करता है। वेद जिसे आनन्दघन रूप बताता है, वही ब्रह्म ब्रज में सखाओं द्वारा खेल से निकाल दिये जाने पर रोता है। वेद जिसे सम्पूर्ण विश्व का स्वामी बताता है वही ब्रह्म कृष्ण ब्रजगोपियों की दासता करता है। वेद जिसकी महिमा का पूर्ण रूप से वर्णन करने में असमर्थ होकर ''नेति- नेति'' कहने लगता है। वह सखाओं को कंधे पर बिठाकर उनका घोड़ा बनकर ब्रजभूमि में दौड़ लगा रहा है। **'कृपालु'** कहते हैं-मैं इस आश्चर्य को आश्चर्य नहीं मानता। कारण श्री कृष्ण सदा भक्ति के वश में है।

१५

धन धन गोपीजन प्रेमधन धन धन,
धन धन त्रिभुवन गोपीजन धन धन।

जेहि श्रुति कह अज सत चित सुख घन,
सोइ बन्यो ब्रज यशुमति नँदनंदन।
जेहि श्रुति कह निर्लेप निरंजन,
सोइ बन्यो ब्रज ब्रजबनितन अंजन।
जेहि श्रुति कह नित तृप्त नँदनंदन,
सोइ रो के कहे मैया दे दे टुक माखन।
जेहि श्रुति कह पूर्णकाम नँदनंदन,
सोइ करे रास ब्रज सँग ब्रज बनितन।
श्रुति कह डरे डर डर नँदनंदन,
सोइ जरासंध भय भाज्यो भयभंजन।
जेहि श्रुति कह पूर्णब्रह्म नँदनंदन,
सोइ नाचे छाछ हित ब्रज ढिग गोपीजन।
जेहि श्रुति कह सर्वज्ञ नँदनंदन,
सोइ पढ़े उज्जयन क ख ग घ अक्षरन।
श्रुति कह जग चालक नँदनंदन,
सोइ सीखे चलनो यशोमति आँगन।
जेहि कर श्रुति अस्तुति नँदनंदन,
सोइ गारी खाने जाय घर ब्रज गोपीजन।
जेहि कह श्रुति अग्राह्य नँदनंदन,
सोइ बँध्यो ऊखल यशुमति आँगन।
जेहि कह श्रुति हैं 'कृपालु' नँदनंदन,
सोइ कृपा माँगे आगे राधा गहवर वन॥

भावार्थ— ब्रज-गोपियों का प्रेम धन्य है। तीनों लोकों

में ब्रज–गोपियों का प्रेम धन्य है। तीनों लोकों में ब्रज–गोपियों का जीवन ही धन्य है। जिसको वेद अज एवं सत् चित् सुखघन स्वरूप कहता है वही ब्रह्म ब्रज में यशोदा और नंद का पुत्र बना। जिसे वेद निर्लेप और निरंजन कहता है वही ब्रज में ब्रजगोपियों के नेत्रों का अंजन बन गया। वेद जिसे नित्यतृप्त कहता है वह यशोदा से रोकर मक्खन माँगता है। जिसे वेद पूर्णकाम बतलाता है वही ब्रजमंडल में गोपियों के साथ रास–विहार करता है। वेद कहता है कि श्री कृष्ण के भय से भय भी भयभीत होता है वही भय को नष्ट करने वाले कृष्ण जरासंध के भय से भागकर द्वारिका के किले में छिपे। जिसे वेद पूर्णब्रह्म कहता है वही नंदपुत्र कृष्ण ब्रज में किंचित् छाछ के हेतु गोपियों के घरों में नृत्य कर रहा है। जिसे वेद सर्वज्ञ कहता है, वही उज्जैन में जाकर गुरु के निकट क ख ग आदि अक्षर पढ़ रहा है। वेद कहता है कि श्री कृष्ण सारे जग को चलाते हैं। वही कृष्ण यशोदा के आंगन में चलना सीख रहा है। वेद जिन श्री कृष्ण की स्तुति करता है। वे ही कृष्ण गाली खाने के लिये गोपियों के घर जाते हैं। जिन श्री कृष्ण को वेद अग्राह्य कहता है वही दामोदर यशोदा के आँगन में ऊखल से बँधे हुए खड़े हैं। जिसे वेद कृपालु बताता है वहीं कृष्ण गह्वरवन में श्री राधा से कृपा की याचना करते हैं।

१६

लागी नहिं छूटे अब कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
गुरु ने जनाया अब जाना यह कान्हा,
तू ही मेरो साँचो यार कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
चाहे निज उर ते लगा ले मोहिं कान्हा,
चाहे ठुकरा दे मोहिं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
लोक जाय चाहे परलोक जाय कान्हा,
उर ते न जाय मम कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
ललित त्रिभंगी छवि तन मन कान्हा,
भाय गइ भाय गइ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
चितवनि हँसनि गवनि रस कान्हा,
इक ते इक बढ़ि कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
अब लौं रह्यों रंक अब कान्हा,
पायो पारस कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
अपना बनाया तोहिं पिय तू कान्हा,
अपना बना न बना कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
निज सुख चाहूँ नहिं सपनेहुँ कान्हा,
चाहूँ नित तव सुख कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
रवि को मिटा दे चाहे तम पै कान्हा,
छोड़ूँ नहिं पाछा तोरा कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
चाहे सलिलहुँ ते निकल घृत कान्हा,
छूटे नहिं यारी अब कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
उर ते निकसि जा तो जानूँ तोहिं कान्हा,

देत चुनौती यह कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
चाह यह तू चाहे या न चाहे कान्हा,
चाहा करूँ हौं 'कृपालु' कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।

भावार्थ— भक्त भगवान् से कहता है- हे कृष्ण! मेरा मन तुममें अनुरक्त हो गया है, अब किसी भी प्रकार से इसे हटाया नहीं जा सकता। गुरु द्वारा मैंने यह ज्ञान प्राप्त किया है कि तुम ही मेरे सच्चे हितैषी मित्र हो। तुम मुझे चाहे अपने हृदय से लगाओ चाहे ठुकरा दो। मेरा लोक-परलोक सभी नष्ट हो जाये परन्तु तुम मेरे हृदय से न निकलना। मेरे तन-मन में तुम्हारी सुन्दर त्रिभंगी छवि समा गई है। तुम्हारी चितवन, तुम्हारा हँसना एवं तुम्हारी चाल सभी एक से एक बढ़कर हैं। अभी तक तुमसे अनभिज्ञ रहने के कारण गरीब था अब तुम्हें पाकर मुझे पारस ही प्राप्त हो गया है। मैंने तुम्हें अपना प्रियतम बना लिया है। तुम मुझे अपना बनाओ या न बनाओ। मैं स्वप्न में भी अपना सुख नहीं चाहता, सदा तुम्हारे सुख की ही कामना करता हूँ। तुम सर्वसमर्थ हो। अंधकार के द्वारा सूर्य के प्रकाश को मिटा सकते हो किंतु मैं तुम्हें नहीं छोड़ूंगा। जल से भले ही घृत निकल आवे किंतु अब मेरी और तुम्हारी मित्रता कभी समाप्त न होगी। तुम यदि समर्थ हो तो मेरे हृदय से निकलकर देखो मैं तुम्हें चुनौती दे रहा हूँ। मेरी एक ही अभिलाषा है- तुम भले ही मुझे प्रेम करो या न करो किंतु मैं सदा तुमसे प्रेम करूँ।

१७

जाना नहिं 'मैं' को मैंने कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
मेरा तन मेरा मन मेरा धन कान्हा,
कहत यदपि नित कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
जो मेरा सो मैं नहिं कान्हा,
यह भी जानत कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
भई विपर्यय मति मम कान्हा,
तव माया ते कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
माना तनु है 'मैं' यह कान्हा,
भई भूल यह कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तनु के सुख हित निशि दिन कान्हा,
कियो अथक श्रम कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
गयो स्वर्ग देखेउँ तहँ कान्हा
सुख लवलेश न कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
कियो योग जप तप व्रत कान्हा,
कहुँ सुख लेश न कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
अब जान्यो साधन बल कान्हा,
कोउ न पाव सुख कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
साधनहीन दीन बनि कान्हा,
जो प्रपन्न हो कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
माँगत दिव्य प्रेम जो कान्हा,
शिशु जनु रो कर कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
वा पर कर 'कृपालु' तू कान्हा,
कृपा वृष्टि नित कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।

भावार्थ— भक्त कहता है- हे कृष्ण! मैंने अपने आत्मस्वरूप को नहीं पहचाना। संसार में सब यही कहते हैं कि यह मेरा शरीर है, मेरा मन है, मेरा धन है। हम यह जानते हैं कि जो 'मेरा' है वह 'मैं' नहीं है तुम्हारी माया ने बुद्धि में भ्रम उत्पन्न कर दिया है। भूल यही हुई कि मैंने स्वयं को शरीर माना। आत्मा नहीं माना। स्वयं को शरीर मानने से शरीर के सुख के लिये ही रात-दिन परिश्रम किया। मैं अपने कर्मानुसार स्वर्ग भी गया परन्तु वहाँ सुख का लेश भी नहीं अनुभव किया। मैंने अनेक प्रकार से योग, जप, तप, व्रत आदि भी किये परन्तु किंचित् भी सुख प्राप्त नहीं हुआ। अब मेरी बुद्धि ऐसा मानती है कि अपने साधन-बल से कोई भी सुख प्राप्त नहीं कर सकता। जो अपने साधन-बल का अभिमान छोड़कर निरभिमानी बनकर तुम्हारे शरणागत हो जाता है और नवजात शिशु की भाँति करुण क्रन्दन करते हुए तुमसे दिव्यप्रेम की याचना करता है, उस पर तुम निरन्तर अपनी कृपा की वर्षा करते हो।

१८

तू ही मेरा तू ही मेरा कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तू ही मम स्वामी सखा सुत पति कान्हा,
तू ही मम माता पिता कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तेरी श्रुति कह तू ही मेरी गति कान्हा,
तोहिं तजि जाउँ कित कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।

तेरी श्रुति कह तू ही देही मम कान्हा,
देही देह दोउ इक कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
'अंशो नाना' अस कह कान्हा,
ब्रह्मसूत्र भी कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
'स त आत्मा' अस कह श्रुति कान्हा,
तू मम आत्मा कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तोसों ही तो है मम कान्हा,
सब ही नातो कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
सब नातन में कोउ इक कान्हा,
जो चहु मानहु कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तुमहूँ जनि भूलहु मोहिं कान्हा,
हौं भूलूँ नहिं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
भुज पसारि परखत तुम कान्हा,
अस रसिकन कह कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
यह जानत मानत नहिं कान्हा,
जगत प्रीति रत कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
सुन्यो मदन मन मोह्यो कान्हा,
मोहहु मम मन कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
सुनत 'कृपालु' न मम मन कान्हा,
तुमहि सुनहु मम कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा॥

भावार्थ— भक्त आत्म समर्पण करते हुए श्री कृष्ण से कहता है- हे श्री कृष्ण! मेरे तो सर्वस्व एकमात्र तुम ही हो, तुम ही मेरे स्वामी, सखा, पुत्र, पति एवं माता-पिता हो। वेद कहता है- जीव की एकमात्र गति तुम ही हो। तुम्हें छोड़कर मैं कहाँ

जाऊँ? वेद कहता है- जीवात्मा की आत्मा तुम ही हो। जिस प्रकार शरीर में जीवात्मा रहती हैं उसी प्रकार आत्मा में तुम रहते हो। जीव तुम्हारे अंश हैं ऐसा ब्रह्मसूत्र कहता है। वेद कहता है-तुम मेरी आत्मा हो। मेरे समस्त सम्बन्ध एकमात्र तुमसे ही हैं। सभी सम्बन्धों में से जो भी तुम्हें अच्छा लगे मान लो। तुम मुझे न भूलो और मैं तुम्हें न भूलूँ। तुम्हारे रसिक सन्त कहते है- तुम भुजायें पसार कर जीव की प्रतीक्षा कर रहे हो। मैं भी यह जानता तो हूँ किंतु मैं तो सांसारिक प्रेम में ही फँसा हूँ। हे श्री कृष्ण! तुमने तो कामदेव के मन को भी मोहित कर लिया था। मेरे मन को भी मोहकर दिखा दो। '**कृपालु**' कहते हैं- हे श्री कृष्ण! मैं मन से हार गया। यह मेरी नहीं सुनता। तुम मेरी पुकार सुन लो।

१९

जानन चह सब कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तेरो नाम बड़ो या कान्हा,
तू ही है बड़ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तू निज सर्वशक्तियुत कान्हा,
नाम मध्य रह कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
यह सब शास्त्र वेद मत कान्हा,
संशय लेश न कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
नाम और नामी दोऊ कान्हा,

याते सम हैं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
लै अवलम्ब नाम को कान्हा,
पतित शुद्ध हों कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
याते नाम बड़ो कह कान्हा,
शुद्ध चित्त प्रिय कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
नामी बड़ो कहत जो कान्हा,
समीचीन सोउ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
नाम बन्यो नामी ते कान्हा,
जानत सब जग कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
शक्ति न दे जो नामहिं कान्हा,
नाम व्यर्थ हो कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
पतितन हित 'कृपालु' तो कान्हा,
नाम बड़ो लघु कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।

भावार्थ— भक्त भगवान् से कहता है-हे कन्हैया! सभी इस रहस्य को जानना चाहते हैं कि तुम्हारा नाम बड़ा है या तुम स्वयं। समस्त शास्त्र-वेद एक स्वर से कह रहे हैं कि तुम अपनी सम्पूर्ण शक्तियों सहित नाम में निवास करते हो। इसमें किंचित् भी संदेह नहीं है। इस दृष्टि से नाम और नामी में कोई अन्तर नहीं है। हे कृष्ण! तुम्हारे नाम का अवलम्बन लेकर पापी से पापी भी शुद्ध हो जाता है। इस दृष्टि से नाम,नामी से बड़ा है। तुम्हें तो पवित्र हृदय वाले भक्त ही प्रिय हैं। जो लोग कहते हैं कि नाम से नामी बड़ा है वे भी उचित ही कहते हैं क्योंकि संसार में सभी जानते हैं कि नाम तो नामी से ही बना

है। यदि तुम अपने नाम में अपनी शक्ति प्रदान न करो तो नाम का कोई मूल्य नहीं रहेगा। '**कृपालु**' कहते हैं कि पतित जनों के लिये तो नाम बड़ा है, स्वयं श्री कृष्ण छोटे हैं।

२०

कैसे कहुँ तू कृपालु कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
सुन्यो बिनु कारण कृपा करे कान्हा,
पतितन पर नित कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
इमि कहि रसिक जनन तोहिं कान्हा,
बड़ो बनायो कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
पै गीतादि कहत तू कान्हा,
चह निर्मल मन कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
मन का मल है माया कान्हा,
त्रिगुणमयी तव कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
श्रुति कह कृपा बिना तव कान्हा,
जाय न माया कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
कोउ कह धर्म कर्म ते कान्हा,
मन हो निर्मल कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
कोउ कह योगमार्ग ते कान्हा,
चित्त शुद्ध हो कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
कोउ कह ज्ञान मार्ग ते कान्हा,
चित्त शुद्ध हो कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
कोउ कह नवधा भक्तिहिं कान्हा,
करत दिव्य मन कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।

पै विद्या माया तो कान्हा,
जाय न कैसेहुँ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
भक्ति अविद्या नासै कान्हा,
जो रज तम गुण कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
एक स्वरूप शक्ति तव कान्हा,
नासै विद्या कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
सार 'कृपालु' एक है कान्हा,
कृपा तिहारी कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा॥

भावार्थ— भक्त कवि कहता है- हे कृष्ण! मैं कैसे कहूँ कि तू कृपालु है। मैंने संतों से सुना है कि तुम बिना कारण ही कृपा करते हो। पतितजन ही तुम्हारी कृपा के विशेष अधिकारी हैं; भक्तों ने ऐसा कह कह कर तुम्हें बड़ा बना दिया। गीता शास्त्र तो कहता है कि तुम शुद्ध मन चाहते हो। तुम्हारी त्रिगुणमयी माया ही मन को अशुद्ध करती है। वेद कहता है- तुम्हारी कृपा के बिना तुम्हारी माया नहीं जाती। कुछ संतजन कहते हैं कि नवधा भक्ति द्वारा मन को शुद्ध किया जा सकता है। विद्या माया तो साधन-भक्ति से भी दूर नहीं होती। भक्ति द्वारा अविद्या त्रिगुणमयी माया का ही नाश होता है। विद्या माया का नाश तो तुम्हारी स्वरूप शक्ति द्वारा ही होता है। '**कृपालु**' कहते हैं कि सबका सार यही है कि तुम्हारी कृपा से ही जीव माया से उत्तीर्ण हो सकता है।

२१

कान्हा सम है छवि कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
ब्रजरस चुवत रहत नित कान्हा,
रोम रोम तव कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
सो रस पियत रसिक नित कान्हा,
तुम वंचित रह कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
जो भी नर तव छवि लख कान्हा,
भूलत तनु सुधि कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
जो भी नारि लखति छवि कान्हा,
तजि दे पतिव्रत कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
जो भी पशु पक्षी लख कान्हा,
बनि जाय जड़ जनु कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
जो भी सुनत मुरलि धुनि कान्हा,
भाजत तव ढिग कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तेरे दर्शन हित शिव कान्हा,
बने शिवानी कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
उमा रमादि लखत तोहिं कान्हा,
भूलीं निज पति कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
ज्ञानी तव दर्शन हित कान्हा,
खरे वृक्ष बनि कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
जा पर हो 'कृपालु' तू कान्हा,
सोइ देखे तोहिं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।

भावार्थ— भक्त कहता है- श्री कृष्ण की सौन्दर्य माधुरी श्री कृष्ण के ही समान है। उनके अंग प्रत्यंग से निरन्तर ब्रज-रस की वर्षा होती रहती है। उस रस का आस्वादन भक्त-जन ही करते हैं। श्री कृष्ण स्वयं अपने रूप-रस का पान नहीं कर पाते। कोई भी मनुष्य यदि कृष्ण-सौन्दर्य सुधा का पान कर लेता है तो वह अपनी सुध बुध भूल जाता है। यदि कोई स्त्री श्री कृष्ण के रूप का दर्शन कर लेती है तो तत्काल पतिव्रत-धर्म को त्याग देती है। जब कोई पशु-पक्षी श्री कृष्ण को देखता है तो वह स्तम्भित होकर जड़वत् प्रतीत होने लगता है। जब वंशीधर की वंशी बजती है तब वंशी के स्वर का ही अनुसरण करते हुए प्राणी स्वर के उद्‌गम-स्थल के निकट दौड़ा चला आता है। श्री कृष्ण-दर्शन की उत्कंठा ने भोलेनाथ को शिव से शिवानी बना दिया। पार्वती एवं महालक्ष्मी आदि सती शिरोमणि नारियाँ श्री कृष्ण का दर्शन प्राप्त कर शिव एवं महाविष्णु जैसे अपने पतियों को विस्मृत कर देती हैं। उद्धव जैसे ज्ञानी ब्रज में वृक्ष बनने की कामना करते हैं। अन्य परमहंस आदि भी श्री कृष्ण दर्शन की लालसा से वृक्ष आदि बने। श्री कृष्ण-कृपा के अभाव में कोई भी उनका दर्शन नहीं कर सकता। दर्शन तो कृपा-साध्य ही है।

२२

तुम ते न कम हम सुनु बनवारी,
हम तुम दोउ ही हैं सम बनवारी।

तुम भी हो अज अनादि बनवारी,
हम भी हैं अज अनादि बनवारी।
तुम भी हो चित चेतन बनवारी,
हम भी हैं चित चेतन बनवारी।
तुम भी हो अति निर्मल बनवारी,
हम भी हैं अति निर्मल बनवारी।
तुम भी हो नित्य सखा बनवारी,
हम भी हैं नित्य सखा बनवारी।
तुम भी रहहु उर पुर बनवारी,
हम भी रहहिं उर पुर बनवारी।
तुम भी हो मन बुधि पर बनवारी,
हम भी हैं मन बुधि पर बनवारी।
तुम भी हो व्यापक जग बनवारी,
हम भी हैं व्यापक तनु बनवारी।
तुम भी हो सनातन बनवारी,
हम भी हैं सनातन बनवारी।
तुम भी हो आनँदघन बनवारी,
हम भी हैं आनँद कन बनवारी।
तुम भी हो मायायुत बनवारी,
हम भी हैं मायायुत बनवारी।
भेद तू मायापति बनवारी,
हौं 'कृपालु' मायिक बनवारी॥

भावार्थ— एक जीवात्मा अपने नित्य सखा श्यामसुन्दर से विचित्र ढंग से कह रही है- हे बनवारी! हम तुमसे किसी

प्रकार से भी कम नहीं है। हम और तुम एक समान ही हैं। तुम अज और अनादि हो तो हमारा भी कभी जन्म नहीं हुआ। हम भी अनादिकाल से हैं। तुम चैतन्य एवं ज्ञान स्वरूप हो। तुम्हारा अंश होने के कारण मैं भी चित् चेतन स्वरूप हूँ। तुम अत्यन्त पवित्र हो तो मैं भी तुम्हारे समान ही अमल हूँ। हम तुम परस्पर नित्य सखा हैं- "द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया----" तुम परमात्मा होने से सबके हृदय में वास करते हो, मैं जीवात्मा भी हृदय में ही रहता हूँ। तुम भगवान् होने के कारण मन बुद्धि से अतीत हो तो मैं भी जीवात्मा होने से मन-बुद्धि द्वारा ग्राह्य नहीं। तुम सम्पूर्ण विश्व में व्यापक हो, मैं शरीर में व्यापक हूँ। तुम सनातन हो तो मैं भी सनातन हूँ। "ममैवांशो--- जीवभूतः सनातनः।" तुम आनन्दघन रूप हो तो मैं जीव भी आनन्दरूप ही हूँ। तुम मायायुत हो, मैं भी मायायुत हूँ अन्तर इतना ही है कि तुम मायाधीश हो और मैं मायाधीन हूँ।

२३

सुनु मन लक्षण प्रेमी, प्रेमी प्रेमी प्रेमी।
दत्त चित्त हरि सुमिरत प्रेमी,
होत खंभ सम प्रेमी, प्रेमी प्रेमी प्रेमी।
रूप माधुरी सुमिरत प्रेमी,
होत स्वेदयुत प्रेमी, प्रेमी प्रेमी प्रेमी।
सुमिरत होत हर्षयुत प्रेमी,

पुलक रोम प्रति प्रेमी, प्रेमी प्रेमी प्रेमी।
सुमिरत अधिक हर्ष ते प्रेमी,
स्वर गदगद हो प्रेमी, प्रेमी प्रेमी प्रेमी।
सुमिरत दिव्य श्याम छवि प्रेमी,
होत कंप तनु प्रेमी, प्रेमी प्रेमी प्रेमी।
विरह अगिनि तपि विरही प्रेमी,
हो विवर्ण तनु प्रेमी, प्रेमी प्रेमी प्रेमी।
सुमिरि मिलन सुख नैनन प्रेमी,
आनँद जल बह प्रेमी, प्रेमी प्रेमी प्रेमी।
दरशन हित दृग व्याकुल प्रेमी,
अश्रुधार बह प्रेमी, प्रेमी प्रेमी प्रेमी।
सुमिरि श्याम बूड़े मन प्रेमी,
तब मुर्छित हो प्रेमी, प्रेमी प्रेमी प्रेमी।
सात्विक भाव आठ इमि प्रेमी,
तनु प्रकटत नित प्रेमी, प्रेमी प्रेमी प्रेमी।
प्रेम 'कृपालु' बढ़ै जित प्रेमी,
प्रकट भाव तित प्रेमी, प्रेमी प्रेमी प्रेमी।

भावार्थ— प्रेमियों के लक्षण बताते हुए कहा गया है श्री हरि-में अनुराग करने वाले प्रेमी जन एकाग्रचित्त होकर अपने प्राणों के प्राण श्री कृष्ण का चिंतन करते हुए 'स्तम्भ' नामक सात्विक भाव को प्राप्त होकर जड़ के समान प्रतीत होते हैं। श्री हरि की अलौकिक रूपराशि का स्मरण करते हुए वे स्वेदयुक्त हो जाते हैं। कभी प्रियतम का स्मरण करते हुए रोमांचित हो उठते हैं। हरि-स्मरण में दत्तचित हुए प्रेमी-जनों का कण्ठ

गद्‌गद् हो जाता हैं। श्यामसुन्दर की दिव्य छवि का समाधि में दर्शन प्राप्त कर प्रेमियों के शरीर में 'वेपथु' नामक सात्विक भाव का उदय होता है तब वे काँपने लगते हैं। विरही के शरीर का रंग पीला पड़ जाता है। मिलन-सुख में डूबे हुए प्रेमी नेत्रों से आनन्दाश्रु बहाते रहते हैं। कभी दर्शन हेतु व्याकुल हुए नेत्रों से जलधारा प्रवाहित करते हैं। श्यामसुन्दर के स्मरण में सुध बुध भूले हुए प्रेमी 'मूर्च्छा' नामक सात्विक भाव को प्राप्त हो जाते हैं। इस प्रकार प्रेमियों के शरीर में आठों सात्विक भाव (स्तम्भ, स्वेद, रोमांच, स्वरभेद, कम्प, वैवर्ण्य, अश्रु, मूर्च्छा) निरन्तर प्रकट होते रहते है। जितना प्रेम वृद्धि को प्राप्त होता है, उतने ही सात्विक भाव उदय होते हैं।

२४

तुमहि श्याम इक मेरे, मेरे मेरे मेरे।
इक ते इक बढ़ि अगनित तेरे,
हैं विशुद्ध चित चेरे, मेरे मेरे मेरे।
हौं नहिं बनि सक कबहूँ तेरे
हैं अनंत अघ मेरे, मेरे मेरे मेरे।
यद्यपि कहत रसिक जन तेरे
बनहु श्याम के चेरे, मेरे मेरे मेरे।
तदपि न भाव वचन मन मेरे,
रहत विषय के चेरे, मेरे मेरे मेरे।

सब जग जानत हम हैं तेरे
जान अघन तू मेरे, मेरे मेरे मेरे।
रहौं सदा कामादिक चेरे,
महामोह तम घेरे, मेरे मेरे मेरे।
बने न बिना अनुग्रह तेरे
विधि हरि हरहूँ चेरे, मेरे मेरे मेरे।
हौं तो बनि माया के चेरे,
रह्यो विमुख नित तेरे, मेरे मेरे मेरे।
साधन बल न बने कोउ तेरे,
यह सोचहु प्रभु मेरे, मेरे मेरे मेरे।
मन प्रपन्न हो तब ही तेरे,
तू 'कृपालु' जब हेरे, मेरे मेरे मेरे॥

भावार्थ— भक्त अपना दैन्य प्रकट करते हुए श्यामसुन्दर से कहे रहा है- हे श्याम! मेरा कहीं भी कोई नहीं है। एकमात्र तुम ही मेरे हो। तुम्हारे लिये तो एक से एक बढ़कर विशुद्ध दास हैं, किन्तु मैं पापात्मा होने के कारण कभी तुम्हारा नहीं बन सकता। तुम्हारे भक्तगण कहते हैं कि सबको ही श्री कृष्ण की भक्ति करनी चाहिये किंतु मैं विषयों का दास हूँ ,अतः मुझे सन्तों की वाणी नहीं सुहाती। संसार समझता है कि मैं तुम्हारा हूँ परन्तु तुम सर्वान्तर्यामी होने के कारण मेरे पापों से भली प्रकार परिचित हो। मैं तो काम क्रोध आदि का दास हूँ। अत्यन्त अज्ञान के अन्धकार में ठोकर खा रहा हूँ। तुम्हारी कृपा के बिना तो ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव भी तुम्हारे दास नहीं बन सकते। मैं

तो माया का दास बनकर सदा तुमसे विमुख ही रहा। हे प्रभु! मुझे विश्वास है कि अपने साधन-बल से कोई भी जीव तुम्हारा नहीं बन सकता। '**कृपालु**' के शब्दों में जब तुम अपनी कृपा दृष्टि किसी पर करते हो तभी किसी का मन तुम्हारे शरणागत होता है।

२५

अपना बनाया तोहिं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
अब लौं बनाया तनु के कान्हा,
मात पिता सुत कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
सबने मीठी बातन कान्हा,
साधा स्वारथ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
स्वार्थ हानि लखतहिं सब कान्हा,
मित्र शत्रु बन कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
काल विवश पुनि तजि सब कान्हा,
काल कवल भये कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
जितनो इन्द्रिय विषयन कान्हा,
भोग्यो जग महँ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
उतनोइ बढ़ी वासना कान्हा,
ज्यों घृत आहुति कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
जहँ किय मनहिं सक्त अति कान्हा,
जग महँ कतहूँ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
मर कर पाव सोइ गति कान्हा,

भव बंधनयुत कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
ज्ञानी भरत सरीखे कान्हा,
हिरन सक्त भये कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
पायो अपर जन्म महँ कान्हा,
देह हिरन की कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
नर ही सों न सुरहुँ सों कान्हा,
करे प्रेम यदि कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
सोउ नश्वर दुख मिश्रित कान्हा,
दे न साथ नित कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
मायाबद्ध सबै जन कान्हा,
स्वार्थ दास रह कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तू ही तो 'कृपालु' इक कान्हा,
नित्य साथ दे कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा॥

भावार्थ— भक्त अपने इष्ट श्री कृष्ण के प्रति अपने हृदय के भाव प्रकट करते हुए कहता है- हे श्री कृष्ण! मैंने अब तुम्हें अपना बना लिया है। अभी तक तो शरीर के माता पिता, पुत्र आदि को ही मैं अपना समझता रहा। सांसारिक सम्बन्धियों ने मीठी बातों द्वारा मुझसे अपना स्वार्थ पूर्ण किया। तनिक भी स्वार्थ-हानि होते ही मित्र शत्रु बन गये। शारीरिक-सम्बंधी समयानुसार मेरा साथ त्यागकर काल के गाल में चले गये। पाँच इन्द्रियों के विषय (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध) जितने मैंने भोगे, उतनी ही वासना की वृद्धि होती गई, जिस प्रकार घृत डालने से अग्नि बढ़ती जाती है। संसार में जिसने

जहाँ अपना मन आसक्त किया मृत्यु के उपरान्त उसे भव-बन्धन युक्त गति ही प्राप्त हुई। जड़ भरत जैसे ज्ञानी भी मृग-शावक में आसक्त होने के कारण मृग-शरीर को प्राप्त हुए। यदि कोई देव-योनि के किसी जीव से भी प्रेम करेगा तो उसे दुख - मिश्रित गति ही प्राप्त होगी क्योंकि सभी योनियों के जीव मायाबद्ध एवं स्वार्थ के दास हैं। "सुर नर मुनि सब कै यह रीती, स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती।" भक्त कहता है- हे श्री कृष्ण! एकमात्र तुम ही ऐसे हो जो जीव के नित्य सखा होने के कारण सदा ही जीव का साथ देते हो।

२६

का न कान तव कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
पतित पुकार सुनत नित कान्हा,
भयो कहा अब कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
मम उर बैठि लखत नित कान्हा,
कर्म शुभाशुभ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
हौं तो तव मायावश कान्हा,
भूलि गयो तोहिँ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
मायाधीन जीव की कान्हा,
शरण गही नित कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
भ्रम्यो लक्ष चौरासी कान्हा,
योनि सदा ते कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।

कर्म शुभाशुभ करि करि कान्हा,
बाँध्यो आपुहिं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
कबहूँ स्वर्ग लोक गये कान्हा,
कबहुँ नरक गये कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
कबहुँक करि करुणा तुम कान्हा,
दिये मनुज तनु कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
गुरु ने दिया ज्ञान भी कान्हा,
तुम ही हो मम कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तदपि 'कृपालु' पतित मन कान्हा,
मान पतित नहिं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।

भावार्थ— भक्त खीझकर श्रीकृष्ण से कहता है- हे कृष्ण! क्या तुम्हारे, कान नहीं हैं? तुम तो पतित-जनों की पुकार शीघ्र ही सुन लेते हो, अब मेरी बार क्या हो गया? मेरे हृदय में बैठकर तुम मेरे शुभ- अशुभ कर्मों को देखते रहते हो। मैं तो तुम्हारी माया द्वारा प्रेरित होकर तुम्हें भूल गया। मैंने अज्ञान के कारण मायाधीन जीवों की ही शरण ग्रहण की। इस कारण चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करता रहा। मैंने शुभ अशुभ कर्म करके स्वयं ही मकड़ी के जाले की भाँति स्वयं को फँसा लिया। मैंने कभी स्वर्ग-लोक की यात्रा की, कभी नरक की। तुमने कृपा करके कभी मानव शरीर दे दिया। गुरु ने भी मुझे समझाया कि एकमात्र श्रीकृष्ण ही तेरे हैं। मन की मलिनता के कारण मुझ पतित ने यह कभी स्वीकार नहीं किया।

२७

आज मैं सुनावूँ खोटी खरी कछु छलिया,
सच लागे कड़ुवा जगत जाने छलिया।
चारों वेदों में कहा है तूने यह छलिया,
मैं हूँ अंशी मेरे अंश जीव सब छलिया।
कोऊ सुधा सिन्धु चाहे पूरा पिये छलिया,
चाहे चुल्लू भर पिये फल इक छलिया।
अंशी गुण अंश में भी रहें सब छलिया,
पुनि तेरे गुण मुझमें न काहे छलिया।
तू तो विभु अग जग व्यापक छलिया,
मैं तो अणु तनु में ही व्यापक छलिया।
तू तो पूर्ण ज्ञानमय रहे नित छलिया,
मैं तो सर्वदा ही अल्प ज्ञानमय छलिया।
तू तो दिव्य आनँद युत रहे छलिया,
मैं तो अगनित दुख युत रहूँ छलिया।
तू तो सब का ही है नियामक छलिया,
मैं तो हूँ नियम्य तेरी माया का भी छलिया।
तू तो माया को नचावे मायाधीश छलिया,
मैं तो तेरी मायावश नाचूँ नित छलिया।
तू तो है स्वतंत्र सर्वशक्ति युत छलिया,
मैं तो परवश अल्पशक्ति युत छलिया।
तू तो शुद्ध बुद्ध नित्य युक्त रहे छलिया,
मैं तो कर्मबन्धन युत नित छलिया।
यदि हूँ मैं तेरा तो दे निज गुण छलिया,

या तो तू 'कृपालु' कहु झूठी श्रुति छलिया।

भावार्थ— भक्त प्रेम की अटपटी भाषा में अपने इष्ट को उलाहना देते हुए कहता है- हे छली कृष्ण! आज मैं भी तुम्हें कुछ खोटी खरी सुनाने को विवश हो गया हूँ। हे श्यामसुन्दर! संसार भी जानता है कि सत्य बड़ा कटु होता है। तुमने चारों वेदो में यह घोषणा की है कि तुम अंशी हो एवं जीव तुम्हारे अंश हैं। कोई अमृत का पूरा समुद्र पी ले अथवा अंजली भर कर पिये तो फल एक ही होगा। अंशी के समस्त गुण अंश में भी रहते हैं। मैं तुमसे प्रश्न करता हूँ कि तुम्हारे गुण मुझमें क्यों नहीं हैं? तुम विभु होने के कारण सर्वत्र जग में व्यापक हो किंतु मैं अणु होने के कारण केवल शरीर में ही व्यापक हूँ। हे छलियों के शिरोमणि! तुम तो निरन्तर ज्ञान से पूर्ण रहते हो किंतु मैं तो सदा ही अल्प ज्ञान से युक्त हूँ। तुम सदा सर्वदा दिव्य आनन्द से परिपूर्ण हो और मैं निरन्तर असंख्य दुख झेल रहा हूँ। तुम सबके नियामक हो और मैं तुम्हारी दासी माया द्वारा भी शासित हो रहा हूँ। हे छल बल से परिपूर्ण श्यामसुन्दर! तुम मायाधीश होने के कारण माया को नचा रहे हो और मैं मायाधीन होने के कारण तुम्हारी माया द्वारा नचाया जा रहा हूँ। हे छली सम्राट! तुम सर्व शक्तिमान होने के कारण सदा स्वतन्त्र हो। नारद जी ने कहा कि परम स्वतन्त्र न सिर पर कोई। किंतु मैं अल्प शक्तियुक्त होने के कारण सर्वथा परतन्त्र हूँ। तुम सदा शुद्ध बुद्ध हो किंतु मैं कर्म- परवश होने के कारण बन्धन में हूँ।

यदि तुम यह कहते हो- "मैं तुम्हारा हूँ" "ममैवांशो जीव लोके---" (गीता) तो अपने सभी गुण मुझे भी प्रदान करो। यदि तुम मुझे अपने समान नहीं बना लेते हो तो फिर यह कहो कि तुम्हारे वेद पुराण सब झूठे हैं।

२८

तू प्रियतम मैं प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
प्राण जाँय भल पै व्रत प्यारी,
छुटै न तो सन यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
प्रियतम सेवा ही चह प्यारी,
चाह न और हमारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
काहुहिं भुक्ति मुक्ति लग प्यारी,
मोहिं लग प्यारी यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
गुण लखि प्यार न कर यह प्यारी,
है अकाम मम यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
क्षण क्षण वर्धमान यह यारी,
जानि न सक संसारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
मूकास्वादनवत् यह यारी,
कहि न सकत श्रुतिचारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
देना देना ही है यारी,
लेना जान न प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
मान न मान मोहिं तू प्यारी,

घटै न याते यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
जल जलनिधि सम है मम यारी,
दोउ इक प्रियतम प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
जो 'कृपालु' चह पिय सुख प्यारी,
जानु साँचु सोइ यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।

भावार्थ— भक्त अपने इष्ट के प्रति अपने हृदय के भाव प्रकट करते हुए कहता हैं- हे प्रियतम कृष्ण! तुम मेरे वास्तविक प्रियतम हो और मैं एकमात्र तुम्हारी ही प्रेयसी हूँ। मेरा यह प्रण है कि प्राण भले ही ही चले जायें परन्तु तुम्हारे साथ मेरा प्रेम सम्बन्ध कभी छिन्न नहीं होगा। यह प्रेयसी केवल तुम्हारी सेवा ही चाहती है, मेरी अपनी कोई इच्छा नहीं है। किसी को भुक्ति, मुक्ति अच्छी लगती होंगी परन्तु मुझे तो तुम्हारे प्रेम में ही सुख मिलता है। यह प्रेयसी तुमसे निष्काम प्रेम करती है। मेरा प्रेम तुम्हारे किसी गुण के कारण नहीं है। मेरी प्रीति के रहस्य को कोई भी सांसारिक व्यक्ति नहीं समझ सकता क्योंकि यह प्रीति प्रतिक्षण वृद्धि को प्राप्त होती है। "गुणरहितं कामनारहितं प्रतिक्षणवर्द्धमानम्।" (नारदभक्ति सूत्र) "मूकास्वादनवत्" होने के कारण चारों वेद इस प्रीति-रीति का वर्णन करने में असमर्थ हैं। "नारद भक्ति सूत्र" में कहा गया हैं- "अनिर्वचनीयं प्रेमस्वरूपम्, मूकास्वादनवत्" प्रेम में देना ही देना है प्रेमी कभी कुछ लेना नहीं चाहता। तुम भले ही मुझे अपनी प्रेयसी स्वीकार न करो, इससे मेरा प्रेम न्यूनता को प्राप्त

नहीं होगा। जिस प्रकार समुद्र और समुद्र का जल अभिन्न है उसी प्रकार मैं तुमसे अभिन्न हूँ। 'कृपालु' कहते हैं– जो प्रेयसी प्रियतम का सुख चाहती है उसी का प्रेम वास्तविक प्रेम है।

२९

आ भी जावो कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
अब लौं सह्यो दुसह दुख कान्हा,
सहि न जात अब कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
भ्रमत भ्रमत जग अग जग कान्हा,
बीते युग युग कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तव श्रुति कह पुनि पुनि यह कान्हा,
हम तव तुम मम कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
साँचो मीत एक तुम कान्हा,
कहत रसिकहूँ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
किंतु मिले कबहूँ नहिं कान्हा,
तुम काहे मोहिं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
श्रुति भगवान कहत तोहिं कान्हा,
षडैश्वर्य युत कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
अपनी ओर निहारहु कान्हा,
कृपा कोर करु कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
मायाधीन दीन हौं कान्हा,
अघ अवतारी कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
श्रुति कह तुम जेहि चह पिय कान्हा,

सोइ सुहागिनि कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
प्यार करो या मारो कान्हा,
तुम ही मम पिय कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
अब नहिं छोड़ूँ पाछा कान्हा,
यह 'कृपालु' हठ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा॥

भावार्थ— भक्त अपने प्राणाधार श्री कृष्ण को सम्बोधित करते हुए कहता है- हे प्राणधन! अब तो आ जावो। मैं जबसे तुमसे पृथक् हुआ मैंने नाना प्रकार के असंख्य दुःख सहन किये। तुलसी दास जी ने कहा है-

जिव जब ते हरि ते बिलगान्यो,तब ते देह गेह निज मान्यो।
माया वश स्वरूप बिसरायो, तेहि भ्रम ते दारुण दुख पायो।

किंतु अब मेरी सहनशक्ति समाप्त हो चुकी है। हे श्री कृष्ण संसार में मुझे भटकते भटकते युग पर युग व्यतीत हो गये तुम्हारी वाणी वेद भी यह कह रही है- हम तुम्हारे हैं, तुम हमारे हो। संतजन भी कहते हैं- सच्चे मित्र तो एकमात्र तुम्हीं हो। गीता में तुमने कहा हैं-

"सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा शान्तिमिच्छति"

किंतु अभी तक तुम मुझे मिले क्यों नहीं? वेद तो तुमको षडैश्वर्य (ऐश्वर्य, धर्म, यश, श्री, ज्ञान, वैराग्य) युक्त भगवान् कहता है। हे प्रियतम! अपने विरद की ओर देखकर मुझ असहाय पर अकारण ही कृपा दृष्टि करो। मैं तो माया के वशीभूत साक्षात् पाप का अवतार ही हूँ। वेद कहते हैं- जिसे तुम स्वीकार कर लो वही जीवात्मा सौभाग्यशालिनी है। "यमेवैष वृणुते तेन...."

तुम मुझे प्रेम करो या मारो किंतु मेरे तो प्रियतम तुम ही रहोगे। 'कृपालु' कहते हैं- मैंने भी हठ ठान लिया है कि मैं तुम्हारा पीछा नहीं छोडूंगा।

३०

दीनबंधु गुन भाये कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
सुनि गुन भक्तवत्सलहिं कान्हा,
अति डर लागे मोय कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
मैं तो हूँ सदा ते भक्त जग का ही कान्हा,
याते जग भाये मोय कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
रसिकन मुख सुन्यो बार बार कान्हा,
जीव का तो सर्वस कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
किंतु किया सुना अनसुना नित कान्हा,
करी नहिं भक्ति तव कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
सुत वित नारि पति आसक्ति कान्हा,
मन न तजन चह कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
माँगा जन जन ते भिखारी बनि कान्हा,
नित्य दिव्य सुख कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
किंतु वे भी थे भिखारी मेरी भाँति कान्हा,
सब ही ने धोखा दिया कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
अगनित जनम गमाये मैंने कान्हा,
यूँ ही भीख माँगन महँ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
जनम जनम का भिखारी मैं हूँ कान्हा,

मोते बड़ो दीन कौन कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
यदि यह सच तू है दीनबंधु कान्हा,
बन जा तू मेरा बंधु कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
दीन भाव झूठा तेरा यदि कहु कान्हा,
कैसे बने तेरा बंधु कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तू 'कृपालु' भी तो है तू कृपा करि कान्हा,
दीन बना दे मोहिं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।।

भावार्थ— भक्त अपने इष्ट के प्रति कह रहा है- हे कन्हैया, मुझे तो तुम्हारा 'दीनबन्धु' गुण प्रिय लगता है। 'भक्तवत्सल' गुण को सुनकर तो मैं भयभीत हो जाता हूँ। हे कृष्ण! मैं तो सदा से संसार का ही भक्त हूँ। मुझे तो संसार ही सुहाता है। यद्यपि रसिक-जनों से बार बार मैंने सुना है- तुम ही जीव के एकमात्र सर्वस्व हो। परन्तु मैंने रसिक संतों की वाणी को सुनकर भी अनसुना कर दिया। मैंने कभी स्वप्न में भी तुम्हारी भक्ति नहीं की। हे श्री कृष्ण! मेरा मन पुत्र, स्त्री, पति एवं धनादि की आसक्ति का त्याग नहीं करना चाहता। मैंने सदा से संसार के समक्ष भिखारी बनकर प्रत्येक जीव से दिव्य सुख प्राप्त करने की चेष्टा की, किंतु वे तो मेरे समान भिखारी ही थे। अत: मुझे सबसे धोखा ही प्राप्त हुआ। इस प्रकार से जगत् से सुख की भीख माँगते हुए मैंने असंख्यों जन्म नष्ट कर दिये। हे दीनबन्धु! मैं जन्म जन्म का भिखारी हूँ अत: मुझसे बढ़कर दीन तुम्हें कौन मिलेगा? यदि तुम वास्तव में दीनबन्धु हो तो मेरे बन्धु बनकर दिखा दो। यदि तुम कहते हो कि मेरी दीनता

कृत्रिम है तो तुम अपनी कृपा से मुझे दीन बना दो। तुम अकारण 'कृपालु' भी तो हो, अत: किसी भी प्रकार से मेरे बनकर दिखा दो।

३१

धनि धनि यशुमति मैया, मैया मैया मैया।
जेहि रस हित विधि हरि हर मैया
तरसत रह नित मैया, मैया मैया मैया।
सो रस पियत रैन दिन मैया,
तबहूँ प्यासी मैया, मैया मैया मैया।
एक दिना गये रूठि कन्हैया,
वाय मनावति मैया, मैया मैया मैया।
पुनि पुनि पूछति यशुमति मैया,
का चहु कहहु कन्हैया, मैया मैया मैया।
आव न कैसेहुँ गोदिहिं मैया,
रोवत भजत कन्हैया, मैया मैया मैया।
घेरेहु चहुँ दिशि सखिन कन्हैया,
पूछति सखि सँग मैया, मैया मैया मैया।
ऊँ ऊँ करि पग पटकि कन्हैया,
कहत अबहिं ला मैया, मैया मैया मैया।
का लावूँ नवनीत कन्हैया,
नहिं नहिं नहिं नहिं मैया, मैया मैया मैया।
का लावूँ दधि दूध कन्हैया,

ना ना ना ना मैया, मैया मैया मैया।
का खुरचन मँगवाउँ कन्हैया,
नहिं मैया नहिं मैया, मैया मैया मैया।
का छेना मँगवाउँ कन्हैया,
नहिं नहिं ना ना मैया, मैया मैया मैया।
जो भी चहु सो माँगु कन्हैया,
अबहिं देउँ कह मैया, मैया मैया मैया।
यदि कहु प्रानन प्रान कन्हैया,
प्रानहुँ दे तोहिं मैया, मैया मैया मैया।
कह तुतुराय 'कृपालु' कन्हैया,
तुलहिनि ला दे मैया, मैया मैया मैया॥

भावार्थ— यशोदा के सौभाग्य का क्या वर्णन किया जाय! जिस रस को प्राप्त करने हेतु ब्रह्मा, विष्णु एवं शंकर तरसते रहते हैं, उस रस का निरन्तर पान करते हुए भी यशोदा की पिपासा बढ़ती ही जाती है। एक दिन बालकृष्ण रूठ गये। यशोदा अपने लाड़ले को मनाने लगीं। यशोदा बार बार कन्हैया से पूछती हैं- हे कान्हा! क्या लेना चाहते हो? यशोदा लाला को अपने आँचल में लेना चाहती हैं परन्तु वे तो रोते हुए दूर भागते हैं। सखियों से घिरे हुये रोते हुए कन्हैया पैर पटकते हुए ऊँ ऊँ करते हुए बोले- मैया! मुझे अभी लाकर दो। मैया ने पूछा- कन्हैया क्या तुम माखन लोगे? किसी सखी ने कहा- लालन! दही या दूध लोगे? कन्हैया "ना ना" करते हुए मचलने लगे। यशोदा ने लाड़पूर्वक लाल से प्रश्न किया कन्हैया! खुरचन

खाओगे? कन्हैया और अधिक रूठकर "ना ना" करने लगे। कोई सखी बोली– लालन! छेना मँगवा दूँ। बाल कृष्ण और भी रोते हुए "नहीं नहीं" करने लगे। यशोदा मैया बोलीं– हे मेरे प्राण प्यारे लाल! तुम्हारी जो इच्छा हो बता दो। मैं अभी ही वही वस्तु तुम्हें दूंगी। तुम मेरे प्राणों के प्राण हो, मैं तुम्हारी प्रसन्नता के हेतु तुम्हें अपने प्राण भी दे सकती हूँ। '**कृपालु**' के शब्दों में कन्हैया अपनी मैया से कहने लगे– मैया! मुझे दुल्हिन दो।

३२

मातु जगावत कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
भई भोर उठु उठु रे कान्हा,
उठे ग्वाल सब कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
माखन मिश्री रोटी कान्हा,
मुख धो खा ले कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
धनसुख मनसुख आदिक कान्हा,
द्वार पुकारत कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
कहत ग्वाल चलु चलु रे कान्हा,
गोचारण हित कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
यदि किय बेर जात हम कान्हा,
रहु घर इकलो कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
हारि कह्यो मैया सुनु कान्हा,

कान खोलि निज कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
सबरो माखन दाउहिं कान्हा,
जात खवावन कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
ऊँ ऊँ करत उठत नहिं कान्हा,
तानि पीत पट कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
पुनि कह मैया तेरी कान्हा,
बनौं न मैया कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
दाऊ की ही मैया कान्हा,
हौं बनिहौं अब कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
जब मैया कह आई कान्हा,
भानुकुँवरि लखु कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तब 'कृपालु' उठि बैठे कान्हा,
लखत चहूँ दिशि कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा॥

भावार्थ— यशोदा मैया बालकृष्ण को जगाती हुई कहती हैं-अरे कनुआ! शीघ्र उठ। प्रात:काल हो गया। ग्वाल बाल उठकर तुझे बुला रहे हैं। मुख धोकर माखन रोटी खा ले। तेरे सखा-गण-धनसुख, मनसुख आदि द्वार पर तेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं। गोचारण का समय हो चुका अत: ग्वाल बाल शीघ्रता करने को कह रहे हैं। कन्हैया को विलम्ब करते देखकर ग्वाल-बाल कहने लगे-कन्हैया! अधिक विलम्ब करोगे तो हम सब तुम्हें अकेला छोड़कर वन को चले जायेंगे। यशोदा मैया ने देखा किसी प्रकार से भी कृष्ण शैया का त्याग नहीं करते तो कहने

लगीं- कन्हैया! कान खोलकर सुन लो। मैं सम्पूर्ण माखन दाऊ को खिला दूँगी। कन्हैया फिर भी नहीं उठे। ऊँ ऊँ करते हुए पीताम्बर तानकर सो गये। मैया ने कहा- मैं तेरी मैया नहीं बनूँगी, मैं तो दाऊ की ही मैया बनूँगी। पुनः यशोदा कहने लगीं अरे कान्हा! देख राधा आ गई। '**कृपालु**' जी कहते हैं कि श्री राधा का आगमन सुनकर कन्हैया चारों दिशाओं की ओर देखते हुए उठ बैठे।

३३

अब न कहौं तोय मैया, मैया मैया मैया।
सबै सखन सँग भैया मैया,
मोय रुवावत मैया, मैया मैया मैया।
कारो कारो कहि कहि मैया,
नचत सखन हँसि मैया, मैया मैया मैया।
प्रथम कहत रह कनुवा मैया,
अब कह कलुवा मैया, मैया मैया मैया।
तू इनकी सब मानति मैया,
मेरी सुनति न मैया, मैया मैया मैया।
ले अपनी यह लकुटी मैया,
ले यह कामरि मैया, मैया मैया मैया।
अब गैयान चरावन मैया,
कभू जाउँ नहिं मैया, मैया मैया मैया।
तेरी गोद न अइहौं मैया,

नवनि न खैहौं मैया, मैया मैया मैया।
तोसों प्यार न करिहौं मैया,
और बनैहौं मैया, मैया मैया मैया।
मोते कहत सखन सब मैया,
परो मिल्यो तू मैया, मैया मैया मैया।
तू भी सुनत न मोरी मैया,
करति न गोरो मैया, मैया मैया मैया।
करिहौं करिहौं कहि कहि मैया,
मोहिं भुरावति मैया, मैया मैया मैया।
अब 'कृपालु' जोगी बनि मैया,
अलख जगैहौं मैया, मैया मैया मैया॥

भावार्थ— भोले भाले बालकृष्ण यशोदा से कहते हैं- अरी मैया! मैं अब कभी तुमको अपनी मैया कहकर नहीं बोलूँगा। बलदाऊ भैया सखाओं के साथ मिलकर मुझे रुलाते हैं। सखा मण्डली मुझे काला काला कहकर हँसते हुए नाचती है। पहले तो ये सब मुझे 'कनुआ' कहकर सम्बोधित करते थे, अब तो 'कलुवा' कहकर पुकारते है। अरी मैया! तुम भी तो दाऊ भैया और सखाओं की बात को ही सत्य मानती हो, मेरी बात तो सुनती ही नहीं हो। मैया! अपनी लकुटी और कामरी ले लो! मैं अब कभी गाय चराने नहीं जाऊँगा। न तो मैं अब तुम्हारी गोद में ही कभी आऊँगा और न माखन खाऊँगा। मैं अब तुमसे प्यार नहीं करूँगा कोई दूसरी मैया बना लूँगा। सखा-गण मुझसे कहते हैं- कि मैं तुमको कहीं पड़ा मिला था। मैं तुम्हारा वास्तविक

पुत्र नहीं हूँ। तुम मेरी माँ होती तो मेरी बात मानतीं। मैं तुमसे कहता हूँ कि मुझे काले से गोरा बना दो, किंतु तुम कहती तो रहती हो कि गोरा बना दूँगी परन्तु अभी तक तुमने मुझे गोरा नहीं बनाया। तुम मुझे धोखा देती रही हो। कन्हैया के शब्दों में **'कृपालु'** ने मैया से कहा- अब मैं घर से निकलकर योगी बनकर अलख जगाऊँगा।

३४

अबहिं बड़ो करु मैया, मैया मेरी मैया।
करिहौं करिहौं इमि कहि मैया,
मोहिं भुराव जनि मैया, मैया मेरी मैया।
जब देखो तबहीं सब मैया,
लघु लखि डाटत मैया, मैया मेरी मैया।
कहत बड़न की सेवा मैया,
धर्म तिहारो मैया, मैया मेरी मैया।
सबते बड़ो बना दे मैया,
दाउँ लेउँ तब मैया, मैया मेरी मैया।
भैया बहुत खिझावत मैया,
कहत बड़ो मैं मैया, मैया मेरी मैया।
सब मो पै शासन कर मैया,
विवश मान सब मैया, मैया मेरी मैया।
सुनहु कन्हैया कह तब मैया,

बड़ो करे यदि मैया, मैया मेरी मैया।
गोद खिलावे काको मैया,
तू ही पुनि कहु मैया, मैया मेरी मैया।
कह 'कृपालु' भैया को मैया,
गोद खिलावहु मैया, मैया मेरी मैया।

भावार्थ— बालकृष्ण माता यशोदा से कहते हैं- अरी मैया! मुझे तो अभी बड़ा कर दो। तुम बार बार कहती हो कि बड़ा कर दूँगी ऐसा कहकर मुझे धोखे में मत रखो। मुझे छोटा समझकर सभी जब तब डाटते रहते हैं। सब मुझसे कहते हैं कि तुम छोटे हो, छोटों को बड़ों की सेवा करनी चाहिये। यदि तुम मुझे सबसे बड़ा बना दो तो मैं सबसे अपना दाँव चुका लूँगा। दाऊ भैया अपने को बड़ा समझकर मुझे बहुत तंग करते है। सभी मेरे ऊपर नाना प्रकार से शासन करते हैं। मैं अपने को छोटा समझकर विवशता से सबका शासन सहन कर लेता हूँ। कन्हैया की बातें सुनकर माता यशोदा ने उत्तर दिया- हे कन्हैया! यदि मैं तुम्हें अभी बड़ा बना दूँ तो फिर मैं गोद में किसे खिलाऊँगी? '**कृपालु**' के शब्दों में कन्हैया ने उत्तर दिया- मैया! तुम दाऊ भैया को ही गोद में लिया करो।

३५

सोचति मन मन मैया, मैया मैया मैया।
बड़ो होय कब मोर कन्हैया,

कहे मोय सो मैया, मैया मैया मैया।
कब घुटुवन बल चलइ कन्हैया,
लखौं दृगन हौं मैया, मैया मैया मैया।
कब पग पटकत मोर कन्हैया,
कह 'दे माखन मैया, मैया मैया मैया।
कब कछु माँगन हेतु कन्हैया,
झगरइ मारइ मैया, मैया मैया मैया।
कब तुतराय पुकार कन्हैया,
ऐया कहि निज मैया, मैया मैया मैया।
कब चल नंग धड़ंग कन्हैया,
गोद हेतु ढिग मैया, मैया मैया मैया।
कब भैया सों झगरि कन्हैया,
देय उरहनो मैया, मैया मैया मैया।
कब लोटत भू लखूँ कन्हैया,
बिरुझावनि छवि मैया, मैया मैया मैया।
कब 'कृपालु' गोपाल कन्हैया,
जाय चरावन गैया, मैया मैया मैया।

भावार्थ— यशोदा अपने बालगोपाल के विषय में कल्पना करती हैं- कब मेरा कन्हैया बड़ा होगा। कब मुझे मैया मैया कहकर बुलायेगा। कब मैं अपने नेत्रों से निज लाल को घुटनों के बल चलते देखकर सुख पाऊँगी। वह दिन कब आयेगा जब मेरा कृष्ण बाल-सुलभ चेष्टायें करते हुए मुझसे मक्खन की याचना करेगा। कब ऐसा होगा जब कुछ माँगते हुए कृष्ण,

मुझसे खीझकर अपने छोटे छोटे हाथों से मुझे मारेगा। कब कृष्ण तुतलाते हुए मैया न कह सकने के कारण मुझे 'ऐया' कहकर पुकारेगा। बाल-गोपाल वस्त्र रहित अवस्था में ही कब मैया की गोद प्राप्त करने हेतु दौड़े चले आयेंगे। यशोदा कामना करती हैं-ऐसा कब होगा जब दाऊ से झगड़ते हुए कृष्ण मेरे निकट उलाहना देने आयेंगे। पुनः यशोदा पुत्र से सम्बंधित भविष्य की कल्पना करती हैं- मेरा कृष्ण बाल स्वभाव वश कब मुझसे रूठकर पृथ्वी पर लोट जायगा। रूठे हुए कृष्ण की उस मनभावनी छवि का दर्शन मैं कब करूँगी। '**कृपालु**' के शब्दों में यशोदा पुनः सोचती हैं कि मेरा गोपाल कब गायें चराने जायेगा।

३६

मति बाँधे मोहिं मैया, मैया मैया मैया।
माखन चोर कहत मोहिं मैया,
झूठी गूजरि मैया, मैया मैया मैया।
लाखन धेनु हमारे मैया,
मनन दूध दे मैया, मैया मैया मैया।
दूध दही माखन तो मैया,
मो घर एतिक मैया, मैया मैया मैया।
माँगि माँगि लै जावैं मैया,
गोबर वारी मैया, मैया मैया मैया।
एतिक गैयन जाके मैया,

चोर कहत तेहि मैया, मैया मैया मैया।
याकी सास कहति रहि मैया,
बहू चोर मम मैया, मैया मैया मैया।
डाटै सास जबै येहि मैया,
आवे तोहिं ढिग मैया, मैया मैया मैया।
इक दिन कहति रही यह मैया,
मन मोह्यो क्यों मैया, मैया मैया मैया।
जब पूछी मन केहि कह मैया,
हँसन लगी तब मैया, मैया मैया मैया।
पुनि पुनि देत उरहनो मैया,
तू सच मानति मैया, मैया मैया मैया।
लाल 'कृपालु' साँचु कह मैया,
डाटि भगा दे मैया, मैया मैया मैया॥

भावार्थ— बालकृष्ण भय से काँपते हुए माता यशोदा से कहते हैं- अरी मैया! मुझे बाँध मत ये गूजरी झूठी है, जो मुझे माखन की चोरी लगा रही हैं। हमारे घर में लाखों गायें हैं। मनों दूध हमारे घर में होता है। मेरे घर में दूध, दही, माखन का अभाव नहीं है। गोबर पाथने वाली गोपियाँ माँगकर ले जाती है। जिसके घर में इतनी गायें हैं, यह गूजरी उसे चोर कह रही है। मैया! एक दिन इस गूजरी की सास कहती थी- मेरी बहू चोर है। जब इसकी सास इसे फटकारती है तब यह तेरे निकट आ जाती है। एक दिन मुझसे कहने लगी- कन्हैया! तुमने मेरा मन क्यों मोहित कर लिया? जब मैंने पूछा- मन किसे कहते

हैं- तब यह हँसने लगी। ये बार बार उलाहना देने आती है तू इसकी बात को सत्य मान लेती है। '**कृपालु**' कहते हैं- मैया! तुम्हारा लाल सत्य ही कहता है। गूजरी झूठी है इसे भगा दो।

३७

बाँधे मति ऊखल मैया, मैया मैया मैया।
तेरो सुत निर्दोष कन्हैया,
ये सब झूठी मैया, मैया मैया मैया।
मोहिं कह माखनचोर कन्हैया,
नरक न डर इन मैया, मैया मैया मैया।
सो कत माखन चोर कन्हैया,
जेहि घर नव लख गैया, मैया मैया मैया।
अति ऊँचो छींको इन मैया,
छोटो तोर कन्हैया, मैया मैया मैया।
ये सब मोहिं बुलावति मैया,
चलु घर मोर कन्हैया, मैया मैया मैया।
पुनि कह मो गरीब घर मैया,
टुक खा नवनि कन्हैया, मैया मैया मैया।
जब जाऊँ तो ये सब मैया,
घेरहिं तोर कन्हैया, मैया मैया मैया।
पुनि पुनि मोहिं नचावति मैया,
का कर तोर कन्हैया, मैया मैया मैया।
नहिं नाचूँ तो मारें मैया,

गुलचन गाल कन्हैया, मैया मैया मैया।
कोउ कह दे दे मुकुट कन्हैया,
कोउ कह मुरलिहिं मैया, मैया मैया मैया।
कोउ कह दे नूपुरन कन्हैया,
पीत वसन कोउ मैया, मैया मैया मैया।
ये दो चार आठ नहिं मैया,
जनु टिड्डी दल दैया, मैया मैया मैया।
तू जाने यह तोर कन्हैया,
भोरो भारो मैया, मैया मैया मैया।
मिठ बोलनि उर विष इन मैया,
साँचो कहत कन्हैया, मैया मैया मैया।
सब कह पप्पी देउ कन्हैया,
सब चूमति मुख मैया, मैया मैया मैया।
पुनि पुनि धमकावति सब मैया,
चलु ढिग मातु कन्हैया, मैया मैया मैया।
निर्बल छोटो तोर कन्हैया,
ये सब धींगरि मैया, मैया मैया मैया।
तेरी सौंह ख़वावति मैया,
कहु पुनि आउँ कन्हैया, मैया मैया मैया।
जो न खाउँ तव सौंह जु मैया,
आवन पावुँ न मैया, मैया मैया मैया।
सौंह खाउँ तो जाऊँ मैया,
सौंह उतारन मैया, मैया मैया मैया।
आपुन सौंह कहत सच मैया,
मानु मानु मम मैया, मैया मैया मैया।

छाँड़ु 'कृपालु' खात अब मैया,
आपुनि सौंह कन्हैया, मैया मैया मैया।।

भावार्थ— गोपियों के उलाहने सुनकर यशोदा मैया बालकृष्ण को ऊखल से बाँधने लगीं तब कन्हैया कहते हैं- अरी मैया! तू मुझे ऊखल से न बाँध। तेरा पुत्र निरपराध है। गोपियाँ झूठमूठ ही मेरी शिकायत किया करती हैं। ये तो भगवान् से भी नहीं डरती हैं। मुझे माखन चोर बताती हैं। जिसके घर में नौ लाख गायें हैं, वह गोपियों के घर माखन चुराने क्यों जायगा? इनका छींका जिस पर मक्खन रखा रहता है बहुत ऊँचा होता है। मैं तो बहुत छोटा हूँ पुनः मैं इनका मक्खन कैसे चुरा लूँगा? पहले तो ये सब मुझसे कहती हैं कि कन्हैया हमारे घर चलो। घर ले जाकर कहती हैं-मुझ गरीबिनी का भी मक्खन खा लो। सब की सब मुझे घेर कर नाचने को कहती हैं। बार बार मुझे नचाती हैं। मैं अकेला भला इनसे कैसे जीत सकता हूँ? यदि नहीं नाचता तो मेरे गाल में गुलचा मारती हैं। कोई गोपी मेरे सिर का मुकुट माँगती है, कोई मुरली, कोई मेरे पैरों के नूपुर एवं कोई पीताम्बर माँगती है। ये दो चार नहीं, टिड्डी दल के समान इनकी संख्या सीमित नहीं है। यशोदा से कन्हैया कहते हैं कि तू तो जानती ही है कि तेरा पुत्र अत्यन्त भोला भाला है। ये गोपियाँ मुख से तो मीठा बोलती हैं परन्तु इनके हृदय में विष भरा है। तुम्हारा कन्हैया कभी झूठ नहीं बोलता। सभी गोपियाँ मेरे मुख का चुम्बन करती हैं। तत्पश्चात् मुझे धमकी देती हैं

कि आज मैया के निकट चलो तब तुम्हें बताऊँगी। गोपियाँ हृष्ट पुष्ट हैं। मैं तो दुबला पतला हूँ। दुबारा माता की सौगंध खिलाती हैं। यदि मैं तुम्हारी सौगंध न खाऊँ तो इनके घर से अपने घर भी नहीं आ सकता। यदि सौगंध खाता हूँ तो उसे उतारने के लिये दुबारा इनके घर जाना ही पड़ेगा। मैया मैं अपनी सौगन्ध खाता हूँ मैं जो कह रहा हूँ मेरी बात सच मान ले। 'कृपालु' माता यशोदा से कहते हैं– मैया! कन्हैया अब अपनी सौगंध खा रहा है अतः अब इसे ऊखल से न बाँधो।

३८

तोरे सँग खेलूँ नहिं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
जब देखो तब झगरत कान्हा,
हारत पुनि पुनि कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
हारत रोवत पुनि पुनि कान्हा,
दाउँ देत नहिं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
चढ़ि कदम्ब तरु मुरलिहिं कान्हा,
छेड़त तानन कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
गैयन काहिं बहोरन कान्हा,
जात न कबहूँ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
हम सब सों ही कह नित कान्हा,
जा बहोरि ला कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तुम्हरे बाबा को नहिं कान्हा,

हैं हम चाकर कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
काहुहिं भरत चहुँटिया कान्हा,
खैंचत चोटिहिं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
आपुन भोजन भाव न कान्हा,
सखन छोरि खा कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
करहु 'कृपालु' क्षमा येहि कान्हा,
अब न करै अस कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा॥

भावार्थ— ग्वाल बाल अपने सखा कृष्ण से कहते हैं- हे कृष्ण! हम तुम्हारे साथ नहीं खेलेंगे। तुम तो बिना कारण के ही झगड़ा करते हो। खेल में बार बार हार जाते हो। जब हारते हो तब रोने लगते हो। हारने पर दाँव भी नहीं देते। कदम्ब-वृक्ष पर चढ़कर मुरली बजाना आरम्भ कर देते हो। वन से लौटते समय कभी गायों को एकत्रित करने नहीं जाते हो। हम सब सखा ही तुम्हारी गायों को भी लौटाते हैं। क्या हम तुम्हारे पिता के नौकर हैं जो सदा तुम्हारी सेवा करें? वन भोजन के समय कभी तुम अपने घर से आया हुआ भोजन नहीं करते। दूसरे सखाओं से छीन कर उनका ही भोजन करते हो। किसी को नोंचते हो, किसी की चोटी खींचते हो। **'कृपालु'** कृष्ण के पक्ष से कहते हैं -हे मित्रों इस बार क्षमा करो। क्षमा करो। आगे से पुनः कृष्ण इस प्रकार की चेष्टायें नहीं करेगा।

३९

तू नहिं मोरी मैया, मैया मैया मैया।
झगरत अति बिरुझाय कन्हैया,
लेत बलैया मैया, मैया मैया मैया।
मैया कह का चहिय कन्हैया,
जो चहु कहु निज मैया, मैया मैया मैया।
मैं न लाल तव कहत कन्हैया,
तू भुराय मोहिं मैया, मैया मैया मैया।
मोहिं बतायेउ आजुहिं भैया,
परो मिल्यो तू मैया, मैया मैया मैया।
याही ते है तोर कन्हैया,
अति कारो तन मैया, मैया मैया मैया।
साँचु साँचु कहु कहत कन्हैया,
शपथ मोर तोहिं मैया, मैया मैया मैया।
परो मिल्यो तू नाहिं कन्हैया,
हौं साँची तव मैया, मैया मैया मैया।
बोले झूठ सदा ते भैया,
मानु मोर कह मैया, मैया मैया मैया।
तोको भोरो जानि कन्हैया,
रहत चिढ़ावत भैया, मैया मैया मैया।
कह 'कृपालु' यह तोर कन्हैया,
सब कोइ बाबा मैया, मैया मैया मैया।

भावार्थ— बालकृष्ण माँ से झगड़ रहे हैं। अत्यन्त खीझे हुए कृष्ण यशोदा से कहते हैं- तू मेरी माँ नहीं है। यशोदा अपने लाल की इस झाँकी पर बलिहार जाती हैं। पुनः पुत्र से पूछती हैं-तुम क्या चाहते हो? मुझे बताओ तो सही। कृष्ण कहते हैं-तुम मुझे धोखा दे रही हो, मैं तुम्हारा पुत्र नही हूँ। मुझे आज दाऊ भैया ने बताया था कि मैं तुम्हें कहीं पड़ा हुआ मिला हूँ। यदि मैं तुम्हारा पुत्र होता तो तुम्हारे शरीर की भाँति मेरा शरीर भी गौरवर्ण का होता। कृष्ण ने यशोदा को अपनी सौगन्ध खिलाकर कहा-मुझे सत्य बात बताओ। यशोदा ने उत्तर में कहा- हे कृष्ण! तुम मुझे पड़े हुए नहीं मिले हो, मैंने तुम्हें जन्म दिया है। मेरा कहना मानो। दाऊ तो सदा से ही झूठ बोलते रहते हैं। पुनः यशोदा ने पुत्र को समझाया- हे कृष्ण! तुम अत्यन्त भोले भाले हो, अतः बलदाऊ तुमको झूठी बातें बनाकर बहकाते रहते हैं और तुम चिढ़ जाते हो। '**कृपालु**' यशोदा से अपना मत बताते हैं- हे यशोदे! यह तुम्हारा पुत्र नहीं सारे जगत् का पिता है।

४०

निज घर चोरी कर कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
भोरो भारो वारो कान्हा,
चलत घुटुरुवनि कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
अवनि नवनि मटुकी लखि कान्हा,

लार चुवत मुख कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
लगे सोचने मन महँ कान्हा,
है माखन मोहिं खाना, कान्हा कान्हा कान्हा।
लख्यो चहूँ दिशि नटखट कान्हा,
कोउ न दीख कहुँ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
मटुकिहिं डारि दोउ कर कान्हा,
खान लगे जब कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
निज प्रतिबिम्ब खम्भ मणि कान्हा,
देखि अपर शिशु जाना, कान्हा कान्हा कान्हा।
यह भी चोर मोर सम जाना,
पुनि वासों कह कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तुमहूँ चोर चोर हौं कान्हा,
करि ले यारी कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
ले आधो माखन कह कान्हा,
इमि समुझावत कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
पुनि प्रतिबिम्ब खवावत कान्हा,
खात न कत कह कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
आय अचानक मैया कान्हा,
लखि भोरापन कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
हौं 'कृपालुहूँ' लीला कान्हा,
मातु ओट लख कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।

भावार्थ— एक दिन नंदमहल में बालकृष्ण ने माखन-चोरी लीला की। भोले भाले छोटे से कृष्ण घुटनों के बल चलते हुए जहाँ मक्खन रखा था, उस स्थल पर पहुँच गये। मक्खन के

पात्र को देखते ही माखन चोर के मुख में पानी भर आया। मक्खन के लोभी कृष्ण विचार करने लगे- आज तो अपने घर में ही चुराकर माखन खाना चहिये। चंचल कृष्ण ने इधर उधर दृष्टि दौड़ाई। कहीं कोई दिखाई न दिया। अब तो उनके मन की इच्छा पूरी हो गई। झट से माखन की मटुकी में हाथ डाल दिया। दोनों हाथों से शीघ्रतापूर्वक मक्खन खाने लगे। तभी अचानक मणि खम्भ पर दृष्टि पड़ गई। कृष्ण ने उसमें अपना प्रतिबिम्ब देखा। प्रतिबिम्ब को दूसरा गोप-बालक समझकर उसे भी अपने समान चोरी करते देख कृष्ण बोले- अरे मित्र! तुम भी चोर हो और मैं भी चोर; अतः हम दोनों की मित्रता पक्की हो गई। आधा माखन मैं खाऊँगा आधा तुझे दूँगा। अपने हाथ से जब नंदनंदन माखन का ग्रास प्रतिबिम्ब के मुख में डालने लगे तब उसे खाता न देख बोले- तू माखन खाता क्यों नहीं है? पीछे से अचानक यशोदा ने यह अद्भुत दृश्य देखा। **'कृपालु'** कहते हैं कि माता की ओट में छिपकर मैंने भी भोले भाले बाल गोपाल की इस माखन-चोरी -लीला का दर्शन किया।

४१

सुनु रे कन्हैया कह मैया, मैया मैया मैया।
घर घर कर लँगरई कन्हैया,
खीझी तोरी मैया, मैया मैया मैया।
जाया कर तू पढ़न कन्हैया,

कालिहिं ते सँग भैया, मैया मैया मैया।
कहा पढ़ूँ मैं कहत कन्हैया,
वेद पढ़हु कह मैया, मैया मैया मैया।
वाको फल का कहत कन्हैया,
ज्ञान मिले कह मैया, मैया मैया मैया।
ज्ञान मिलइ केहि कहत कन्हैया,
श्री हरि को कह मैया, मैया मैया मैया।
ज्ञानहुँ फल का कहत कन्हैया,
मिले भक्ति कह मैया, मैया मैया मैया।
भक्तिहिं फल का कहत कन्हैया,
मिले मोक्ष कह मैया, मैया मैया मैया।
मोक्ष न चह हौं कहत कन्हैया,
हौं जो चह सुनु मैया, मैया मैया मैया।
सुनन चहत हौं कहत कन्हैया,
गोपिन गारिन मैया, मैया मैया मैया।
हम 'कृपालु' भज तीनिहुँ मैया,
गोपिन गोपन गैया, मैया मैया मैया।

भावार्थ— माता यशोदा बालकृष्ण से कहती हैं- अरे कृष्ण! तुम गोपियों के घर-घर जाकर चंचलता करते हो मैं तुम्हारी शिकायतें सुन सुनकर अत्यन्त ही खीझ गई हूँ। कल से अपने दाऊ भैया के साथ पढ़ने जाया करो। कृष्ण ने प्रश्न किया- मैं क्या पढ़ूँ? यशोदा बोलीं- वेद। कृष्ण ने पुनः प्रश्न किया- वेद पढ़ने का क्या फल प्राप्त होगा? माता यशोदा ने उत्तर

दिया-वेद पढ़ने से ज्ञान की प्राप्ति होगी। कृष्ण ने प्रश्न किया-ज्ञान किसे कहते हैं? यशोदा बोलीं-ज्ञान श्री हरि का ही पर्यायवाची हैं। श्रीकृष्ण पूछते हैं-ज्ञान का क्या फल है? मैया उत्तर देती हैं- ज्ञान का फल भक्ति है! श्री कृष्ण ने पुनः प्रश्न किया- भक्ति से क्या फल प्राप्त होता है? माता यशोदा ने उत्तर दिया- भक्ति द्वारा कर्म बंधन से मुक्ति प्राप्त होती है। श्रीकृष्ण बोले- मैं मुक्ति नहीं चाहता। मैं तो गोपियों की प्रेमपूर्ण गालियाँ ही सुनना चाहता हूँ। श्री कृष्ण माता यशोदा से कहते हैं-मैं तो गोपियों, ग्वालों एवं गायों का ही स्मरण करता हूँ।

४२

कान्हा सम मम कान्हा, कान्हा मेरो कान्हा।
जननि यशोमति जायो कान्हा,
लाल अनोखो कान्हा, कान्हा मेरो कान्हा।
अलसी सुमन वरन तन कान्हा,
मदन विमोहन कान्हा, कान्हा मेरो कान्हा।
चुवत रोम प्रति ब्रजरस कान्हा,
पियत रसिक रस कान्हा, कान्हा मेरो कान्हा।
मोर मुकुट अटपट सिर कान्हा,
लट घुँघुरारी कान्हा, कान्हा मेरो कान्हा।
रसहुँ सरस रस लोचन कान्हा,
चपल चपल ते कान्हा, कान्हा मेरो कान्हा।
रतन खचित श्रुति कुण्डल कान्हा,

नासा बेसर कान्हा, कान्हा मेरो कान्हा।
गवनि विलोकनि मुसुकनि कान्हा,
लखि अचरजयुत कान्हा, कान्हा मेरो कान्हा।
दुपटी लिपटी लकुटी कान्हा,
गल कौस्तुभ मणि कान्हा, कान्हा मेरो कान्हा।
कर कनकन कंकन दुति कान्हा,
कटि किंकिनि दुति कान्हा, कान्हा मेरो कान्हा।
चरन बजत नूपुर धुनि कान्हा,
छूम छननननन कान्हा, कान्हा मेरो कान्हा।
ग्रीवा कटि पद टेढ़ी कान्हा,
मुरलि अधर धर कान्हा, कान्हा मेरो कान्हा।
अस 'कृपालु' रस अम्बुधि कान्हा,
सखि कह कारो कान्हा, कान्हा मेरो कान्हा॥

भावार्थ— भक्त कहता है श्री कृष्ण के समान तो केवल श्री कृष्ण ही हैं। माता यशोदा ने कन्हैया को जन्म दिया वस्तुतः वह कृष्ण अनोखा ही था। उस यशोदा-नन्दन का दिव्य वपु अलसी पुष्प के समान श्याम वर्ण था। वह कन्हैया अपने अलौकिक रूप से कामदेव के मन को भी हरण करता था। कन्हैया के प्रत्येक रोम से ब्रज-रस की वर्षा होती थी, रसिक-जन उस मधुर रस का पान करते थे। कन्हैया के शीश पर अनोखा मोर-मुकुट सुशोभित था। यशोदा के अनुपम शिशु की घुँघराली लट मुख चन्द्र को घेरे रहती थीं। साक्षात् रस से भी अधिक रसपूर्ण नेत्र चंचलता से भी चंचल थे। रत्नों से जड़े हुए

कुंडल कानों में शोभा पाते थे। नासिका बेसर से छवि पा रही थी। उस अनोखे शिशु की मन्द मन्द गति चपल चितवनि, एवं मुस्कान आश्चर्य से परिपूर्ण थीं। युगल स्कंध दुपट्टे से आच्छादित थे। लकुटी कर में शोभा पा रही थी। कण्ठ कौस्तुभ मणि से देदीप्यमान था। हाथों में कंकणों की दमक थी। सूक्ष्म कटि प्रान्त किंकिणी की जगमगाहट से परिपूर्ण था। कन्हैया के चरण-प्रान्त नूपुर की छूम छननन ध्वनि से झंकृत थे। ग्रीवा कमर एवं चरण की तिरछी भंगिमा रसिकों के मन को मोहती थी। अरुण अधरों पर मुरली विराजमान थी। **'कृपालु'** कहते हैं- ऐसे रस सागर कृष्ण को सखियाँ प्रेम-वश काला कहती हैं।

४३

नटवारी छवि प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
मोर मुकुट लट अति घुँघुरारी,
मृगमद तिलक सँवारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
श्रुति कुंडल छवि मुनि मन हारी,
नासा बेसर प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
अँखियाँ सुधा गरल मधु वारी,
दृग चितवनि बलिहारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
मधुर मधुर मृदु मुसुकनि प्यारी,
लखि न मोह को नारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
कंध लकुटि अरु कामरि कारी,

कर कंकन छवि न्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
गल गुंजन माला बलिहारी,
बनमाला छवि न्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
झलमलात दुपटी दुति प्यारी,
कौस्तुभ मणि छवि न्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
कनकन किंकिनि धुनि झनकारी,
कटि काछनी प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
पीत वसन दुति दमकनि प्यारी,
पग नूपुर धुनि न्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
कहि न जात गति अति मतवारी,
हंस लजावनि वारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
कोटि अनंग अंग प्रति वारी,
लखि प्यारिहुँ बलिहारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
लखि 'कृपालु' नटवर छवि प्यारी,
नटवरहूँ बलिहारी, प्यारी प्यारी प्यारी॥

भावार्थ— नटवर वेष धारी श्री कृष्ण की प्यारी छवि का कौन वर्णन कर सकता है- सिर पर मोर-पंख का अनोखा मुकुट धारण किये हैं। केशों की लट घुँघराली है। मस्तक पर कस्तूरी का तिलक है। कानों में कुंडल शोभा पा रहे हैं। जिन्हें देखकर मुनियों का मन भी मोहित हो जाता है। नासिका में बुलाक हिल रही है। नेत्र अमृत विष एवं मदिरा से परिपूर्ण हैं। (श्वेतिमा अमृत, श्याम पुतली की कालिमा विष एवं कोरों की लालिमा ही मदिरा है) उन नेत्रों की अनोखी चितवनि पर रसिक-

जन बलिहार जाते हैं। त्रिभुवन में ऐसी कौन सी स्त्री हैं जो श्री कृष्ण की मृदु मुस्कान की मधुरिमा पर मोहित न हो जाय? युगल स्कंधों पर लकुटी और कामरी है। करों के कंकणों की छवि तो अनुपम हैं। गले की गुंजमाला एवं वनमाला की छवि पर भक्त-जन अपना सर्वस्व निछावर करते हैं। पीला दुपट्टा झलमल कर रहा है। कम्बु-कण्ठ कौस्तुभ मणि से सुशोभित है। सूक्ष्म कटि-प्रान्त पर सुन्दर कछनी कसे हैं। स्वर्ण किंकिणी की झनकार निराली ही है। श्याम-तन पर पीताम्बर की दमक है। चरणों में नूपुरों की रुनझुन है। मतवाली चाल अकथनीय हैं। हंस भी उसे देखकर लज्जित हो जाते हैं। एक एक अंग पर करोड़ों कामदेव निछावर किये जा सकते हैं। प्यारी राधा भी इस छवि को निहारकर बलिहार जाती हैं। '**कृपालु**' कहते हैं - स्वयं श्री कृष्ण भी अपनी छवि को निहारकर बलिहार जाते हैं।

४४

वारी बनवारी पर वारी, वारी वारी वारी।
इंद्रनीलमणि तनु बनवारी,
चितघन सुखघन वारी, वारी वारी वारी।
रस झर रोम रोम बनवारी,
छकि छकि पिय ब्रजनारी, वारी वारी वारी।
अस रस भरे दृगन बनवारी,
भूलति सुधि सुकुमारी, वारी वारी वारी।

लखत अनंग अंग बनवारी,
चहत संग बनि प्यारी, वारी वारी वारी।
ललित त्रिभंग रूप बनवारी,
लखि हर बनि गये नारी, वारी वारी वारी।
लखि चितवनि मुसुकनि बनवारी,
मोह न अस को नारी, वारी वारी वारी।
लखि मदमत्त गवनि बनवारी,
उमा रमा मन हारी, वारी वारी वारी।
लखि सुन्दरता तनु बनवारी,
सुन्दरता हूँ वारी, वारी वारी वारी।
सुनत तान मुरलिहिं बनवारी,
सनक समाधि बिसारी, वारी वारी वारी।
जेहि दे दृगन दिव्य बनवारी,
सोइ लखि सक छवि प्यारी, वारी वारी वारी।
निर्मल जन 'कृपालु' बनवारी,
हैं दर्शन अधिकारी, वारी वारी वारी॥

भावार्थ— भक्त श्री कृष्ण की अलौकिक रूप-माधुरी पर अपना सर्वस्व निछावर करते हुए कहता है- मैं प्यारे श्यामसुन्दर पर बलिहार जाता हूँ। श्री कृष्ण का चिदानन्दमय दिव्य शरीर इन्द्रनीलमणि के समान श्याम वर्ण का है। वृन्दावन-विहारी के रोम रोम से निरन्तर रस की वर्षा सी होती रहती है जिसे ब्रज-गोपियाँ सदा ही पान करती रहती हैं। मन-मोहन कृष्ण के रसपूर्ण नेत्रों को देखकर सुकुमारी राधा अपनी देह सुधि को भूल जाती हैं। कामदेव श्री कृष्ण के दिव्य अंगों को

देखकर प्रेयसी बनकर उनका अंग संग प्राप्त करना चाहता है। महादेव शिव ललित त्रिभंग रूप को निहारकर गोपी-वेष धारण कर रास में सम्मिलित होने को जा पहुँचे। श्यामसुन्दर की जादू भरी चितवनि एवं मोहिनी मुस्कान से कौन सी नारी मोहित न होगी? नंदनंदन की मतवाली चाल को देखकर उमा रमा जैसी देवियाँ भी अपना मन उनके चरणों में अर्पित कर देती हैं। मदन-मोहन कृष्ण के शरीर के सौन्दर्य को निहारकर साक्षात् सौन्दर्य भी स्वयं को निछावर कर देता है। मुरलीधर की मुरली की तान सुनकर सनकादिक ब्रह्मर्षि अपनी समाधि भुला देते हैं। जिन बड़भागी जीवों को स्वयं श्री कृष्ण कृपा कर दिव्य नेत्र प्रदान कर देते हैं, वे ही उनकी मुनि-मन मोहिनी रूप-सुधा का पान कर सकते हैं। '**कृपालु**' कहते हैं- पवित्र हृदय वाली जीवात्मायें ही प्रभु के दर्शन की अधिकारिणी बन सकती हैं।

४५

अति ह्वै गई अब मैया, मैया मैया मैया।
लेहु आपुनो गोकुल मैया,
अंत बसें हम मैया, मैया मैया मैया।
ढायो जुलुम सखिन पर मैया,
यह छैया तव मैया, मैया मैया मैया।
जाँय यमुन तट जब हम मैया,
यह आवे नित मैया, मैया मैया मैया।

सँग रह सखन करोरन मैया,
लै लठिया कर मैया, मैया मैया मैया।
फोरत घट सखियन झट मैया,
भाजत हँसि हँसि मैया, मैया मैया मैया।
तोरत सखि मोतिन लर मैया
कह जा कहि दे मैया, मैया मैया मैया।
पुनि कह मोरी जोरी मैया,
कर बरजोरी मैया, मैया मैया मैया।
तूने कियो लाड़ अति मैया,
याही को फल मैया, मैया मैया मैया।
यह जितनोइ छोटो है मैया,
उतनोइ खोटो मैया, मैया मैया मैया।
नेकु सोचु तू निज मन मैया,
भलो लाल को मैया, मैया मैया मैया।
जब यह बड़ो होय तब मैया,
गजब करेगो मैया, मैया मैया मैया।
दधि को दान माँग मग मैया,
कह हौं राजा मैया, मैया मैया मैया।
जो 'कृपालु' नहिं दउँ तो मैया,
फोरे मटुकिहुँ मैया, मैया मैया मैया॥

भावार्थ— ब्रजगोपियाँ यशोदा को उलाहना देते हुए कहती हैं- हे यशोदे! अब तो अति हो गई। तुम अपना गोकुल सम्भालो हम तो कहीं अन्यत्र ही निवास करेंगी। तुम्हारे पुत्र

कृष्ण ने ब्रज-गोपियों की नाकों में दम कर दी है। कहाँ तक कहें-जब हम सखियाँ यमुना-तट पर जल भरने जाती हैं तब यह नित्य ही वहाँ पहुँच जाता है। यह अकेला ही नहीं आता, करोड़ों ग्वाल बाल इसके साथ अपने हाथों में लठिया लिये इसके संकेतानुसार इसके पीछे पीछे चलते हैं। सखियों के जलपूर्ण घड़े फोड़कर ये सब हँसते हुए भाग जाते है। गोपियों के गले की मुक्ता माल तोड़कर कहता है- जा मैया से मेरी शिकायत कर दे। सखियाँ यशोदा को उनके अनोखे लाल की करतूतें बताते हुए पुनः कहती हैं- हे मैया! यह सखियों से कहता है- "तेरी मेरी जोड़ी अच्छी बनेगी"। ऐसा कहकर बलपूर्वक हास परिहासपूर्ण चेष्टायें करता है। हे यशोदे! तुमने वृद्धावस्था में पुत्र को जन्म क्या दिया- लाड़ करके इसे सिर चढ़ा लिया- इसलिये यह इतना बिगड़ गया है। देखने में यह कृष्ण अभी छोटा लगता है परन्तु है अत्यन्त खोटा। पुनः गोपी यशोदा को चेतावनी देते हुए कहती हैं- हे यशोदे! तनिक अपने पुत्र के भविष्य के विषय में सोचो। जब अभी से उसका यह हाल है तब आगे चलकर यह क्या न करेगा? जब गोपियाँ घर से दही बेचने निकलती हैं, तब मार्ग में यह उन्हें रोककर कहता है- 'मैं ब्रजराज हूँ अतः मुझे दही का दान दो'। जब कोई गोपी दही का दान नहीं देती तब यह उसके दही के पात्र को फोड़ डालता है।

४६

इत को तो आना टुक कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तू तो करे सब की ही सेवा नित कान्हा,
सखन सखिन कहँ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
मम गोबर टोकरि टुक कान्हा,
आजा उठवा दे कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तव बाबा को न चाकर कह कान्हा,
हूँ नँदराय सुत कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
सखि कह प्रति टोकरि दउँ कान्हा,
माखन लौंदा कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
हम दोउ गिनति न जानें कह कान्हा,
भइ जित टोकरि कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
सखि कह जेतिक टोकरि कान्हा,
उठवैहौ सिर कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
उतनेइ गोबर टीका कान्हा,
दउँ तव गालन कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
मानि गयो तब भोरो कान्हा,
लार गिरी मुख कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
दोउ कपोल गोबर को कान्हा,
टीका भरि गयो कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तव टीका दिये माथे कान्हा,
पुनि कह चलु घर कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
घर दर्पण दिखाय मुख कान्हा,

हँसीं सबै सखि कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
लखि 'कृपालु' अस मुख छवि कान्हा,
सर्वस वारौं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा॥

भावार्थ— एक सखी कृष्ण को देखकर कहती है- अरे कन्हैया! तनिक मेरे निकट तो आ। सभी ग्वाल बाल और गोपियाँ कहती हैं कि तू सबकी सेवा करता रहता है। मेरी भी गोबर की टोकरी तनिक उठवा दे। कृष्ण ने सखी को उत्तर दिया- मैं नंदराय का पुत्र हूँ तेरे बाप का नौकर तो नहीं हूँ जो तेरी टोकरी उठवा दूँ। सखी ने माखन प्रेमी को लोभ दिखाया। वह बोली- यदि तुम मेरी टोकरी उठवा दोगे तो प्रत्येक टोकरी उठवाने के मूल्य में तुम्हें एक माखन का लौंदा प्राप्त होगा। कन्हैया बोले-न तो तू ही पढ़ी है और न मैं ही पढ़ा हूँ, अतः मैंने कितनी टोकरी उठवाईं यह गिनेगा कौन? सखी ने समस्या का समाधान प्रस्तुत किया- कन्हैया! तुम जितनी टोकरी उठवाओगे, उतने ही गोबर के टीके मैं तुम्हारे गालों पर लगा दूँगी। माखन के लोभी भोले भाले कन्हैया को यह प्रस्ताव जँच गया। माखन प्राप्त करने की कल्पना से मुख में पानी भर आया। छोटे से कन्हैया के दोनों कपोल गोबर के टीके से भर गये। चतुर गोपी ने कृष्ण के छोटे से मस्तक पर भी गोबर का टीका लगा दिया। प्रेम से निज संकेत पर ब्रह्म को नचाने वाली ब्रजांगना ने भक्तवत्सल से घर चलने को कहा। जब कन्हैया उसके पीछे पीछे उसके घर पहुँचे तब उसने दर्पण में कन्हैया को उनका मुख दिखाया। अन्य सखियाँ भी उस अद्भुत छवि

का दर्शन कर हँस पड़ी। **'कृपालु'** कहते हैं–कन्हैया की इस अनोखी झाँकी का दर्शन कर मैं अपना सर्वस्व निछावर करता हूँ।

४७

काहे चित चोरा मोरा कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
चित तो था साथी सदा ते ही मम कान्हा,
मैंने का बिगारा तोरा कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
मैंने भोरा भारा छोरा जाना तोहिं कान्हा,
जाना न लुटेरा तोहिं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
इक बार ही तो देखा मैंने तोहिं कान्हा,
देखना तो पाप नहिं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
पाप भी है तो है मम नैनन कान्हा,
चित क्यों चुराया तूने कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
पप्पू करे पाप गप्पू फल भोगे कान्हा,
ऐसा तो न होय कहुँ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
दे दे मोरा चित सीधे-सीधे अब कान्हा,
जो भल चह निज कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
मोरा चित ना दे जो तो कहूँ जाके कान्हा,
तोरी चोरी प्यारी जू ते कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
सोच मन तब तेरो हाल बुरो कान्हा,
करि देंगी राधारानी कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
राधा रानी जब करें मान तब कान्हा,

पग पकरैगो मम कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
प्यारी ने 'कृपालु' है चुराया चित कान्हा,
याते सब चित चोरे कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा॥

भावार्थ— भक्त प्रेम की विचित्र भाषा में अपने प्रियतम से कह रहा है- हे कृष्ण! तुमने मेरा चित्त क्यों चुराया? मेरा चित्त अनन्त जन्मों से मेरा साथ दे रहा था, तुमने तो उस चित्त को ही चुरा लिया। मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था? मैंने तुम्हें भोला भाला समझा था, तुम तो लुटेरे निकले। मैंने तो तुम्हें केवल एक बार ही देखा था। क्या देखना भी पाप है? यदि पाप भी हुआ तो नेत्रों ने ही तो किया, तुमने मेरा चित्त क्यों चुरा लिया? यह तो ऐसा ही हुआ कि पप्पू पाप करे और गप्पू फल भोगे। ऐसा तो कहीं नही होता। हे कन्हैया! सीधे सीधे मेरा चित्त मुझे लौटा दो। यदि अपना भला चाहो तो दे दो, अन्यथा मैं श्री राधा रानी से तुम्हारे चोरी जारी के अवगुणों की बात कह दूँगी, तब तो तुम्हारा बुरा हाल होगा। जब श्री राधा रानी मान करेंगी तब तुम मेरे पैर पकड़ोगे। '**कृपालु**' कहते हैं- श्री राधा रानी ने तुम्हारा चित्त चुरा लिया है अत: तुम औरों के चित्त चुराते रहते हो।

४८

कैसो है कन्हैया तेरो मैया, मैया मैया मैया।
गागरि फोरी लर तोरी ओरी मैया,

कर बरजोरी भोरी मैया, मैया मैया मैया।
चोरी चोरी ब्रजगोरी चितचोरी मैया,
कह तोरी मोरी जोरी मैया, मैया मैया मैया।
पाछे पाछे आवे कहे हाय हाय मैया,
बनि जा तू मेरी प्यारी मैया, मैया मैया मैया।
मारे काँकरि सिर गागरि मैया,
फारे सिर चूनरि मैया, मैया मैया मैया।
छोटो सो अति खोटो मैया,
बड़ो होय द्रुत मैया, मैया मैया मैया।
पकरन भजै भजै तब मैया,
लजै न नेकहुँ मैया, मैया मैया मैया।
दूरि जाय मटके मुख मैया,
कह ले ठेंगा मैया, मैया मैया मैया।
कारी तनु कारी कृति मैया,
हारीं सबरी मैया, मैया मैया मैया।
कहत कान्ह बिनु एकहिं मैया,
करति सात यह मैया, मैया मैया मैया।
पानिहिं आग लगावति मैया,
अस ब्रज ग्वालिनि मैया, मैया मैया मैया।
कहत 'कृपालु' कन्हैया मैया,
ये अति झूठी मैया, मैया मैया मैया॥

भावार्थ— सखी यशोदा को उलाहना देती हुई कहती है- अरी मैया! तुम तो भोली भाली हो, परन्तु तुम्हारा कन्हैया

तो अत्यन्त ही ढीठ है। इसने मेरा जल का घड़ा फोड़ दिया, गले की माला तोड़ दी। अनेक प्रकार से चंचलतायें करता है। यह चोरी से गोपियों के चित्त चुरा लेता है और कहता है, तेरी मेरी जोड़ी अच्छी रहेगी। मेरे पीछे पीछे चलता है और कहता है तू मेरी प्रेयसी बन जा। सिर के घड़े में कंकड मारता है, चूनरि को फाड़ देता है। यह छोटा है किंतु अत्यन्त ही खोटा है। जहाँ बड़े की आवश्यकता होती है वहाँ शीघ्रता से बड़ा बन जाता है। यदि इसे पकड़ना चाहें तो भाग जाता है। लज्जा तो इसे छू भी नहीं गई। दूर खड़ा होकर मुख मटकाता है फिर अगूँठा दिखा देता है। इसका शरीर तो काला है ही कर्म भी काले ही हैं। सब गोपियाँ इससे हार गईं। गोपियों के प्रेमपूर्ण उलाहने सुनकर नटखट कृष्ण ने यशोदा से कहा- मैया! ये गोपियाँ तो पानी में भी आग लगाने की चेष्टा करती हैं। '**कृपालु**' के शब्दों में चतुर कृष्ण अपने दोषों को छिपाते हुए यशोदा से कहने लगे- मैया! ब्रजगोपियाँ अत्यन्त झूठ बोलती हैं। इनकी कोई भी बात सच नहीं है।

४९

कोउ सखि कान्हा ढिग जा ना, जा ना जा ना जा ना।
औचक मिले कतहुँ यदि कान्हा,
घूँघट पटहिं हटा ना, जा ना जा ना जा ना।
जब सो लखइ और दिशि कान्हा,

तब तू लखु छवि कान्हा, जा ना जा ना जा ना।
जो तोसों कछु बोले कान्हा,
जनि बोलहु हाँ या ना, जा ना जा ना जा ना।
सब कछु सहि ले जो कर कान्हा,
पै दृग दृगन मिला ना, जा ना जा ना जा ना।
झूठहिं कहु हौं ब्याही कान्हा,
लठधारी पति कान्हा, जा ना जा ना जा ना।
ले निकारि मम पति तव कान्हा,
सब ठकुराई कान्हा, जा ना जा ना जा ना।
नहिं डर पिटने ते कह कान्हा,
मम तनु बज्र समाना, जा ना जा ना जा ना।
अब नहिं छोड़े पाछा कान्हा,
जो चहु करु कह कान्हा, जा ना जा ना जा ना।
यह 'कृपालु' साँचो पिय कान्हा,
वेद पुरान बखाना, जा ना जा ना जा ना।

भावार्थ— भक्त अपनी अटपटी भाषा में कहता है- कोई भी सखी कभी भूलकर भी कन्हैया के निकट न जाना। यदि कभी अचानक वह मिल भी जाय तो अपने घूँघट को मुख से हटाना मत। यदि कन्हैया को देखने की इच्छा हो तो जब वह किसी और दिशा की तरफ देखे तब तू उसकी मनोहर मूर्ति का दर्शन कर लेना। यदि कन्हैया तुझसे कुछ बोलना चाहे तो उसकी किसी भी बात का उत्तर हाँ या ना में मत देना। कन्हैया के नटखटपने को सह लेना परन्तु उसके नेत्रों से नेत्र मत मिलाना। कन्हैया से तू झूठ बोलकर अपने को विवाहिता बता देना और

उसे यह कहकर सावधान कर देना कि मेरा पति लठैत है। कन्हैया से कह देना कि मेरा पति तुम्हारी सारी ठकुराई भुला देगा। कन्हैया ने सखी की उपर्युक्त बातें सुनकर कहा मुझे पिटने का भय नहीं है क्योंकि मेरा शरीर वज्र के समान है। प्रेमी कन्हैया ने अपने सहज स्वभाव का परिचय देते हुए कहा- मैं जिसे एक बार पकड़ लेता हूँ फिर कभी नहीं छोड़ता, अत: मैं तुझे नहीं छोड़ सकता। तू मेरे साथ चाहे जैसा व्यवहार कर। '**कृपालु**' कहते हैं-सभी जीवों के सच्चे पति तो एकमात्र श्री कृष्ण ही हैं। ऐसा वेद पुराण बार बार पुकार पुकार कर कह रहे हैं।

५०

चलहु अंत कहुँ मैया, मैया मैया मैया।
ये ऐसी ब्रज ग्वालिनि मैया,
जैसी नहिं कहुँ मैया, मैया मैया मैया।
इनने कीन्हीं अति अति मैया,
सहि न जाय अब मैया, मैया मैया मैया।
मीठी बोल बुलावति मैया,
मो भोरो कहँ मैया, मैया मैया मैया।
जो न जाउँ तो सौंहिं मैया,
तोर खवावति मैया, मैया मैया मैया।
जो जाऊँ तो सब मिलि मैया,
भेंटति पुनि पुनि मैया, मैया मैया मैया।

पुनि सब एक संग मिलि मैया,
मम मुख चूमति मैया, मैया मैया मैया।
ये दस बीस पचास न मैया,
लख लख ग्वालिनि मैया, मैया मैया मैया।
चहुँ दिशि घेरि कहति सब मैया,
नेकु नाचि दे मैया, मैया मैया मैया।
पुनि खींचति निज निज ढिग मैया,
कहति चलहु घर मैया, मैया मैया मैया।
मम घर मम घर मम घर मैया,
कह इक संग सब मैया, मैया मैया मैया।
पुनि चितचोर कहत सब मैया,
चित काको कह मैया, मैया मैया मैया।
कह 'कृपालु' यह भोरो मैया,
चितहुँ न जानत मैया, मैया मैया मैया॥

भावार्थ— बालकृष्ण माता यशोदा से बाल सुलभ भाषा में कह रहे हैं- अरी मैया! अब तुम मुझे लेकर कहीं ब्रज से बाहर चलो। मैया! ब्रज-गोपियों से मैं बहुत दुःखी हो गया हूँ। ऐसी स्त्रियाँ तो संसार में कहीं भी नहीं होंगी। अब तो इन्होंने अति ही कर दी। मैं तो अब इनसे तंग आ गया हूँ। इनके उत्पातों को सहन करना अब मेरी सामर्थ्य से बाहर है, मैं तो भोला भाला हूँ। प्रथम ये मुझे मधुर वाणी में अपने घर बुलाती हैं। यदि मैं नहीं जाता हूँ तो तुम्हारी सौगंध खिला देती हैं। यदि चला जाता हूँ तो सब मिलकर पुनः मुझे अपने हृदय से लगाती हैं, फिर सब एक साथ मिलकर मेरा मुख चूम लेती हैं। ये दस,

बीस, पचास नहीं हैं लाखों हैं। मुझे चारों दिशाओं से घेरकर कहती हैं- कन्हैया तनिक नाच कर दिखा दो। फिर सब अपनी अपनी ओर खींचती हुई घर ले जाने को कहती हैं। सभी गोपियाँ एक साथ ही-' मेरे घर चलो' 'मेरे घर चलो' कहती हुई मुझे तंग करती हैं। फिर सब मुझसे कहती हैं कि तुम चितचोर हो। मैया चित्त किसको कहते हैं? '**कृपालु**' माता यशोदा से कहते हैं- मैया! तुम्हारा लाल अत्यन्त भोला है। यह तो चित्त किसे कहते हैं- यह भी नहीं जानता।

५१

चंचल चल हट तजु अंचल पट,
तू तो सब सों ही कर खटपट नटखट।
तेरे रोम रोम भरो है कपट नटखट,
तोहिं लोक लाज डर नहिं नेकु निपट।
काउ ब्रजगोरी को तू फोरे काँकरि घट,
काउ ब्रजगोरी को तू तोरे लर नटखट।
काउ घर चोरे तू तो माखन नटखट,
तोय पकरि न पावे कोउ भाजे झटपट।
कभु पकरि जो पाये तोहिं कोउ नटखट,
कछु जादू करि बनि जाय वाको पति झट।
मारे तकि तकि दृग बानन नटखट,
काउ चुनरि उतारे फारे कंचुकि पट।
तेरी माया से तो हारे विधि हरि हर नट,

तोहिं जाने सोइ जाको तू जनाये नटखट।
तोरे गुरु दुर्वासा ने बताया नटखट।
तू है हरि अवतारी आया धरि तनु नट।
हम मानें नहिं तोहिं अवतारी नटखट,
हम मानें तोहिं निलज निपट लम्पट।
इतने में आये जाने कित ते 'कृपालु' झट,
बोले प्रेम की कुटिल गति अति अटपट।

भावार्थ— किसी ब्रजगोपी ने श्रीकृष्ण से प्रेम की अटपटी भाषा में कहा–अरे चंचल! दूर हटो। मेरे वस्त्र को छोड़ दो। हे नटखट! तुम्हारे लिये मैं अकेली तो हूँ नहीं तुम तो सभी गोपियों के साथ प्रेम की खींचातानी करते रहते हो। तुम्हारे प्रत्येक रोम में छल-छिद्र भरा है। न तो तुम संसार की मर्यादा को ही मानते हो, न तुम्हें किसी का लेशमात्र भय है। जब कोई ब्रजगोपी यमुना तट पर जल भरने जाती है, तब तुम कंकड़ मारकर उसका घड़ा फोड़ देते हो। कभी किसी के गले की माला तोड़ देते हो। अरे कृष्ण! तुम किसी गोपी के घर जाकर उसका माखन चुराते हो। यदि कोई गोपी तुम्हें पकड़ना चाहे तो बड़ी शीघ्रता से भाग जाते हो। यदि कदाचित् कभी किसी ने पकड़ भी लिया तो योगमाया द्वारा उसके पति का रूप धारण कर लेते हो। यदि कोई गोपी तुमसे उदासीन रहती है तो नेत्रों के कटाक्षपात से उसे घायल कर अपने वशीभूत कर लेते हो। किसी के सिर से चुनरी उतारकर कंचुकी फाड़ देते हो। हे अद्भुत नट! तुम्हारी विचित्र माया से तो सृष्टिकर्ता ब्रह्मा, विष्णु

एवं शिव भी पराजित हो गये। हे नटखट! कोई तुम्हें जान भी तो नहीं सकता। जिसे तुम स्वयं को जनाना चाहो, वही तुम्हें जान सकता है। "सोइ जानइ जेहि देहु जनाई"। तुम्हारे गुरु दुर्वासा द्वारा ज्ञात हुआ कि तुम ही अवतारों के अवतारी श्री हरि हो। मानव शरीर धारण कर जगत्-कल्याण के निमित्त ही तुम अपना दिव्य धाम त्यागकर हमारे मध्य आये हो। इतना सब तो सत्य है परन्तु गोपियाँ तुम्हारे भगवान् रूप को स्वीकार नहीं करती। गोपियाँ तो तुम्हें लम्पट ही मानती हैं। इसी बीच कहीं से '**कृपालु**' ने आकर कहा- प्रेम की अटपटी गति अत्यन्त ही टेढ़ी है।

५२

जा जा भरि पाई तोसों यारी करिके लँगर।
तू तो निकलो बड़ोइ ठगहार लँगर।
तू न भयो निज मैया बाबा को हूँ लँगर।
तजि बंदीगृह भजि गयो गोकुल लँगर।
तूने झूठी-मूठी मीठी-मीठी बातों ते लँगर।
करी यारी भोरी भारी ब्रजनारिन लँगर।
पुनि तजि तिनहुँन गयो मथुरा लँगर।
तहँ किय यारी कुब्जा सी नारी ते लँगर।
पुनि मथुरा ते भजि गयो द्वारिका लँगर।
नहिं आयो ब्रज पुनि धनि धनि वो लँगर।
मैं हूँ ऋणियाँ तिहारो तूने कही थी लँगर।
हमें इत को न छोड़ा न तो उत को लँगर।

यदि ऐसा जानती तो प्रथम ही लँगर।
सारे ब्रज में ढिंढोरा देती झूठा है लँगर।
साँची कह तू 'कृपालु' है गपोड़ी सो लँगर।
अचरज तबहूँ तोहिं भावे सो लँगर॥

भावार्थ— किसी सखी ने श्री कृष्ण से अत्यन्त खीझकर कहा-अरे नटखट! तुमसे प्रीति-सम्बन्ध जोड़कर तो मैं तंग आ गई। मैंने तो तुम्हें भोला भाला समझा था किंतु तुम तो ठगों के भी शिरोमणि निकले तुम तो अपने माता-पिता (वसुदेव-देवकी) के प्रति ही सच्चे नहीं रहे। उन्हें कंस के कारागार में छोड़कर रात्रि में ही गोकुल भाग गये। तुमने झूठ बोलकर मीठी मीठी बातें बनाकर भोली भाली गोपियों के साथ मित्रता निभाने का नाटक किया, किंतु उन्हें त्यागकर मथुरा चले गये। मथुरा में कंस की दासी कुब्जा के साथ प्रीति जोड़ी, पुनः उसे भी त्यागकर द्वारिका चले गये। ब्रजमंडल में पुनः तुम्हारा आगमन नहीं हुआ। तुम्हारी प्रीति को धन्य है। तुम तो गोपियों से कहते थे कि मैं तुम्हारा ऋणी हूँ अब तुम्हारी वे बातें असत्य कैसे हो गईं? तुमने हमें कहीं का भी नहीं छोड़ा। संसार ने भी हमें ठुकरा दिया और तुम भी नहीं प्राप्त हुए। यदि मैं पहले ऐसा समझ लेती तो सम्पूर्ण ब्रजमंडल में तुम्हारे कपट-व्यवहार का ढिंढ़ोरा पिटवा देती। कोई भी तुमसे प्रेम न करता। **'कृपालु'** सखी से कहते हैं-तू ठीक ही कहती है-वह नटखट केवल झूठी मूठी बातें ही बनाता है। आश्चर्य तो यह है कि फिर भी तुझे वह अच्छा लगता है।

५३

जाने न अनारी रति नारी, नारी नारी नारी।
तू तो था सदा ते ही अकेला बनवारी,
अस कह तव श्रुति चारी, नारी नारी नारी।
लोक रीति जाने न तू टुक बनवारी,
वेद रीति माने न मुरारी, नारी नारी नारी।
जब देखो जहँ देखो बिहारी,
सखिन करत दृग चारी, नारी नारी नारी।
गुरु जन सन्मुख हूँ बनवारी,
मारत सैन अनारी, नारी नारी नारी।
मग महँ चलत लखत ब्रजनारी,
कहत निलज तेहिं प्यारी, नारी नारी नारी।
सखियन सन्मुख ही बनवारी,
उर लगाव ब्रजनारी, नारी नारी नारी।
सब सौंइ कह तू मेरी प्यारी,
करि ले मोते यारी, नारी नारी नारी।
न्हात सखिन लखि अंग बिहारी,
इक टक लख बनवारी, नारी नारी नारी।
तू बिहरत गोलोक बिहारी,
तहँ रह तव सब प्यारी, नारी नारी नारी।
बनहु 'कृपालु' प्रथम संसारी,
तब जग आव मुरारी, नारी नारी नारी॥

भावार्थ— ब्रज की किसी सखी ने कृष्ण से कहा- अरे रति-रस से अनभिज्ञ कृष्ण! तुम प्रीति की रीति को क्या जानो? तुम्हारा वेद कहता है- तुम सदा से अकेले ही थे। तुम न तो संसार के व्यवहार को ही जानते हो, न वेद की मर्यादा को मानते हो। जब देखो जहाँ तहाँ गोपियों के साथ नेत्र मिलाते रहते हो। गुरु-जनों के समक्ष भी तुम नेत्रों के कटाक्षपात करते हो। मार्ग में चलते हुए किसी ब्रज-गोपी को देखकर निर्लज्जतापूर्वक उसे 'प्यारी' कहकर सम्बोधित करते हो। सखियों के मध्य ही किसी अपनी प्रेयसी को हृदय से लगा लेते हो। सभी ब्रजांगनाओं से कहते रहते हो कि तू मेरी प्रेयसी है मुझसे प्रेम का सम्बन्ध जोड़ ले। स्नान करती हुई सखियों के अंगों को अपलक दृष्टि से निहारते हो। तुम गोलोक विहारी हो। वहाँ तो सभी गोपियाँ तुम्हारी प्रेयसी हैं। पहले तुम मायिक संसार के व्यवहार को सीखो तब अवतार लेकर यहाँ आना।

५४

जाने का कै गयो कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
मिल्यो यमुन तट नटखट कान्हा,
टेर्यो मुरलिहिँ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
सुनत टेर देख्यों मुरि कान्हा,
लखत बिकी कर कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
मार्यो नैन बान अस कान्हा,

गिरी कहत हा कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
पुनि मो कहँ उठाय कर कान्हा,
उर लगाय लिये कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
निज मुख लाय कान कह कान्हा,
ले बनाय पिय कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
हौं हूँ उर लगाय लिय कान्हा,
लियो लूटि मोहिं कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
अब तो मदन विमोहन कान्हा,
बिसरत नहिं छिन कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
कैसेहुँ घट भरि उर धरि कान्हा,
गइ घर सुमिरत कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
दरस परस रस अस दिये कान्हा,
जित देखूँ तित कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
यार 'कृपालु' जार पिय कान्हा,
चुप रहु धरु उर कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा॥

भावार्थ— अनुभवी भक्त अपने साथ हुई घटना का वर्णन करते हुए कहता है- न जाने कृष्ण ने मेरे ऊपर कैसा जादू कर दिया। एक दिन यमुना के किनारे चंचल कृष्ण मुझे मिला था। उसने मुझे देखकर मुरली की तान छेड़ दी। मैंने मुरली-ध्वनि सुनकर मुड़कर उस ध्वनि के उद्‌गम की ओर देखा। देखते ही मैं उस नटखट के हाथों बिना मूल्य के ही बिक गई। उस चपल कृष्ण ने ऐसे कटाक्ष बाण छोड़े कि मैं हा कृष्ण! कहकर पृथ्वी पर गिर पड़ी। उस रसिकशेखर ने मुझे अपने

कोमल करों से उठाकर हृदय से लगा लिया मेरे कानों से मुख लगाकर उसने कहा- मुझे अपना प्रियतम बना ले! मैंने भी नागर कृष्ण को तत्क्षण अपने हृदय से लगा लिया। कृष्ण ने तो मेरा सर्वस्व ही लूट लिया। कामदेव को भी मोहित करने वाली कृष्ण की रूप माधुरी अब पल भर को भी मेरे हृदय से पृथक् नहीं होती। जैसे तैसे मैंने यमुना-जल से घड़ा भरकर सिर पर रखा। हृदय में परम प्रियतम कृष्ण को धारण कर घर पहुँची। नन्दनन्दन के दर्शन एवं स्पर्श का रस ऐसा अलौकिक था कि अब जिधर देखती हूँ वे ही दिखाई देते हैं। जित देखूँ तित श्याममयी है '**कृपालु**' कहते हैं- हे सखी! यह जार प्रेम की बात किसी से कहना मत। अपने प्रियतम को हृदय में ही धारण कर।

५५

जा रे जा रे कनुआ कारे, कारे कारे कारे।
जितनोइ छोटो है तू कारे,
तितनोइ खोटो कारे, कारे कारे कारे।
सब कहँ आँखि दिखावत कारे,
केहि गुमान तू कारे, कारे कारे कारे।
द्वै बाबा हैं तेरे कारे,
द्वै मैया हैं कारे, कारे कारे कारे।
गाय बहोरन जाय न कारे,
कह तू जा रे कारे, कारे कारे कारे।

चढ़ि कदंब तरुवर पर कारे,
टेरत मुरलिहिं कारे, कारे कारे कारे।
खेलन महँ हारे जब कारे,
दाउँ देइ नहिं कारे, कारे कारे कारे।
कबहुँ बिरावे मुख ते कारे,
कबहुँ चिढ़ावे कारे, कारे कारे कारे।
कबहुँक चोटी खींचे कारे,
कह चलु घोड़े कारे, कारे कारे कारे।
छोरे सखन कौर मुख कारे,
परम स्वारथी कारे, कारे कारे कारे।
कोरी माटी खा तू कारे,
चोरी चोरी कारे, कारे कारे कारे।
तेरे अवगुन सारे कारे,
जानत बलुआ कारे, कारे कारे कारे।
जाय 'कृपालु' कहें सब कारे,
आजु मातु ते कारे, कारे कारे कारे॥

भावार्थ— ग्वाल-बाल कन्हैया से कह रहे हैं-अरे कारे कनुआ! जा जा, तुझे तो हम भली भाँति जानते हैं- तू जितना छोटा है, उतना ही खोटा है। न जाने किस गर्व में तुम फूले फिरते हो। अरे काले कृष्ण! तुम्हारे दो बाबा और दो ही मैया हैं। तुम तो अपनी गायों को भी लौटाने नहीं जाते, दूसरों पर ही आज्ञा चलाते हो। कदम्ब के वृक्ष पर चढ़कर मुरली की तान छेड़ते रहते हो। खेल में हारने पर कभी दाँव देना तो जानते

ही नहीं। सखाओं को कभी मुख से बिराते हो, कभी चिढ़ाते हो। किसी की चोटी खींचकर कहते हो- ऐ घोड़े! चल चल। तुम अत्यन्त स्वार्थी हो। सखाओं के मुख से ग्रास छीनकर खा जाते हो। चोरी से ब्रजरज का भोग लगाते हो। दाऊ भैया तुम्हारे समस्त अवगुणों को जानते हैं। '**कृपालु**' कहते हैं-आज सभी ग्वाल बाल तुम्हारी मैया से तुम्हारी करतूतें कहेंगे।

५६

तू अति भोरी मैया, मैया मेरी मैया।
गोदिहिं बैठि कहत सुनु मैया,
बात बनाय कन्हैया, मैया मेरी मैया।
यह गूजरि भरि गागरि मैया,
जाति रही मग मैया, मैया मेरी मैया।
लखति रही इत उत चहुँ मैया,
फिसलि गयो पग मैया, मैया मेरी मैया।
गिरी अवनि यह गूजरि मैया,
फूटी गागरि मैया, मैया मेरी मैया।
हँसी आइ गइ मो कहँ मैया,
तब खिसियाई मैया, मैया मेरी मैया।
चलन लगी जब आगे मैया,
आयो बड़ कपि मैया, मैया मेरी मैया।
वाने फारी चूनरि मैया,
आय हँसी मोय मैया, मैया मेरी मैया।

झूठहिं दोष लगाय मैया,
तव लाला पर मैया, मैया मेरी मैया।
झूठ सफेद बोल याय मैया,
नरकहुँ डर नहिं मैया, मैया मेरी मैया।
है अवतार झूठ की मैया,
कह 'कृपालु' यह मैया, मैया मेरी मैया॥

भावार्थ—बाल कृष्ण माता यशोदा की गोद में बैठे थे। कन्हैया मैया से बातें बनाने लगे- अरी मैया! तुम तो भोली भाली हो। जो ग्वालिनी मेरी शिकायत लेकर आयी है, उसकी सच्ची कथा मैं सुनाता हूँ। एक दिन यह अपना घड़ा भरकर गली से जा रही थी। यह चारों ओर दृष्टि डालते हुए चल रही थी, अतः इसका पैर फिसल गया। यह पृथ्वी पर गिर पड़ी। सिर का घड़ा फूट गया। उस दृश्य को देखकर मुझे हँसी आ गई। तब यह खिसिया गई। जब यह पुनः खड़ी होकर चलने लगी तब एक बड़ा सा वानर वहाँ आ गया। उस वानर ने इसकी चूनरि फाड़ दी, तब मुझे फिर से हँसी आ गई। यह ग्वालिनी तुम्हारे पुत्र पर व्यर्थ ही आरोप लगा रही है। यह तो झूठ बोलने में तनिक भी संकोच नहीं करती। इसे नरक का भी भय नहीं। **'कृपालु'** के शब्दों में कन्हैया अपनी मैया से कहते हैं कि यह तो साक्षात् झूठ का अवतार है।

५७

तेरी यारी में मैं मारी गई बनवारी,
ऐसी यारी पर बलिहारी बलिहारी।
तूने कहा था है तू तो प्रानन प्यारी,
जाके मधुपुरी भूला तू तो बनवारी।
तोसों लबरा न कोइ जग बनवारी,
मिठी बोलनि ठगे नित परनारी।
तूने कहा था हैं साहूकार ब्रजनारी,
मैं हूँ ऋणियाँ रहूँगा नित बनवारी।
तूने कहा था न छोड़ूँ तोहिं बनवारी,
जा जा कुब्जा बनाया निज घरवारी।
तूने कहा था तू मेरी सब ते ही प्यारी,
वह कहाँ गइ तेरी वाणी बनवारी।
तोहिं लागे अब प्यारी कुबरिहिं नारी,
बनि कुबरी सी हौंहुँ ऐहौं बनवारी।
तू न जाने प्यार वार कछु बनवारी,
तू है ठग ठगे भोरी भारी ब्रजनारी।
तोहिं भावे जोइ सोइ करु बनवारी,
तेरी थी 'कृपालु' रहेंगी भी ब्रजनारी॥

भावार्थ— कोई गोपी प्रणय-वश श्रीकृष्ण पर व्यंग्य करती है- हे वनों में विचरण करने वाले गोविंद! तुमसे प्रीति

जोड़कर मैं तो कहीं की भी नहीं रही। तुम्हारी प्रीति-रीति की बलिहारी है। जब तुम्हें मुझसे सम्बन्ध जोड़ना था तब तुम मुझे अपनी प्राणाधिक प्रिया कहकर सम्मान प्रदर्शन करते थे परन्तु मथुरा जाकर तुम सब कुछ भूल गये। तुम्हारे जैसा लम्पट कौन होगा? मधुर वाणी से सदा ही परस्त्रियों को धोखा देते रहते हो। तुम तो यह कहा करते थे कि गोपियाँ धनी हैं तुम उनके सदा ही ऋणी रहोगे। तुम यह भी कहते थे कि सदा गोपियों के साथ प्रेम का निर्वाह करोगे परन्तु कुब्जा को पाकर ब्रजांगनाओं को भूल गये। तुम तो बड़े सत्यवादी बनते हो किंतु तुम्हारी मेरे साथ की गई सब प्रतिज्ञायें मिथ्या सिद्ध हुईं। अब तो तुम्हें कुब्जा ही प्राणाधिक प्रिय है। मुझे भी कुब्जा जैसा रूप ही बनाकर तुम्हारे निकट आना पड़ेगा। तुम्हारी प्रीति-रीति झूठी है। वस्तुतः तुम तो ठग हो। भोली भाली ब्रज-गोपिकाओं को अपने प्रेमजाल में फँसाकर उन्हें धोखा देते हो। अब हमारे प्रेम का सिद्धान्त भी सुन लो। हम तुमसे प्रेम के व्यवहार की अपेक्षा नहीं करती। तुम्हारी जो इच्छा हो करो। ब्रज गोपियाँ तो तुम्हारी ही थीं और सदा तुम्हारी ही रहेंगी।

५८

धनि बनवारी तोरी यारी, यारी यारी यारी।
योगिन लखन चहत बनवारी,
लखि न पाव छवि प्यारी, यारी यारी यारी।

सोइ मधुपुरी जाय बनवारी,
जोरत कुबरिहिं यारी, यारी यारी यारी।
जेहि कह नेति नेति श्रुति चारी,
विधि बुधिहूँ जहँ हारी, यारी यारी यारी।
सोइ घर घर गारी ब्रजनारी,
जात सुनन बनवारी, यारी यारी यारी।
जेहि रस लगि कैलास बिहारी,
बनि गये नर ते नारी, यारी यारी यारी।
सोइ निकुञ्ज खोजत बनवारी,
रो रो कहि हा प्यारी, यारी यारी यारी।
जेहि रस हित करि करि तप हारी,
रमा सरीखी नारी, यारी यारी यारी।
सोइ 'कृपालु' रस रास बिहारी,
देत सखिन करि यारी, यारी यारी यारी।

भावार्थ— भक्त रसिकता पूर्ण ढंग से अपने इष्ट की प्रेम-चर्चा पर प्रकाश डालते हुए कहता है- हे कृष्ण! तुम्हारी यारी को धन्य है। योगीजन अपने ध्यान में भी तुम्हारी मनोहारिणी मूर्ति का दर्शन नहीं कर पाते, वही तुम मथुरा में कंस की दासी कुब्जा से प्रीति करते हो। जिस ब्रह्म के लिये सम्पूर्ण वेद 'नेति नेति' कहकर अपनी हार मान लेते हैं, वही परब्रह्म स्वरूप साकार ब्रह्म तुम नित्य ही ब्रज में गोपियों की प्रेम भरी गाली सुनने-हेतु उनके घरों में जाते हो। जिस रस-स्वरूप ब्रह्म की प्रीति में शिव नर से नारी बनें, वही रासेश्वर कृष्ण तुम 'हा

राधे!' कहकर निकुंजों में रासेश्वरी की खोज करते हो। महालक्ष्मी ने जिस रास-रस को प्राप्त करने के लिये ब्रज से बाहर ही खड़े रहकर घोर तप किया परन्तु प्राप्त नहीं कर सकीं। उसी दुर्लभ रास-रस को तुमने ब्रज-गोपियों को प्रीतिपूर्वक प्रदान किया। हे रासविहारी तुम्हारी प्रीति-रीति को धन्य हैं।

५९

ना री जाने यारी वारी वारी बनवारी।
तो भी वारी वारी जाँय सब ब्रजनारी।
श्रुति महँ कह यद्यपि बनवारी।
सब व्रत तजु बनु मम व्रतधारी।
पै नहिं लख आपुहिं बनवारी।
नित नव नव कर अगनित प्यारी।
गीतादिक महँ कह बनवारी।
त्यों हौं भज ज्यों भज मम प्यारी।
पुनि कत गये ब्रज तजि बनवारी।
तलफति रहिं पल पल ब्रजनारी।
जाय बसि गये द्वारिका बनवारी।
किय सोरह सहस सौ आठ नारी।
जोइ कह ममता तजु सुत नारी।
दस दस सुत तिन नारी सारी।
जोइ कह जग तजु भजु बनवारी।
सोइ कनक महल दिये प्रति नारी।
छल लिया हमहिं छल बनवारी।

अब नहिं आवहिं छल बनवारी।
नहिं रसिक वसिक कछु बनवारी।
मीठी बोलनि उर विष धारी।
सच कह 'कृपालु' तू ब्रजनारी।
तबहूँ तजि सक नहिं बनवारी॥

भावार्थ— कोई सखी कह रही है- यद्यपि श्री कृष्ण प्रीति-रीति का निर्वाह भली भाँति करना नहीं जानते फिर भी सभी ब्रजगोपियाँ उन पर बलिहार जाती हैं। यद्यपि वेद में श्री कृष्ण कहते हैं- सभी जीवात्माओं को अन्य सभी धर्मों का परित्याग कर एकमात्र मेरी ही शरण में आना चाहिये- "सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज" जीवात्माओं के लिये तो यह उपदेश है परन्तु स्वयं श्री कृष्ण इस धर्म का पालन नहीं करते, वे तो निरन्तर नई नई प्रेयसी बनाकर उनसे प्रेम करते हैं। गीता में श्री कृष्ण कहते हैं- "ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।" जो मुझे जितनी मात्रा में जिस भाव से भजता है मैं भी उसे उतनी ही मात्रा में उसी भाव से भजता हूँ। ब्रज की अनन्य प्रेम करने वाली गोपियों का परित्याग कर मथुरा चले जाने से श्री कृष्ण अपनी उक्त प्रतिज्ञा का पालन नहीं कर सके। वियोगिनी ब्रजांगनायें पल पल तड़पती ही रहीं। मथुरा से भी द्वारिका जाकर बस गये। वहाँ सोलह हजार एक सौ आठ विवाह किये। जो श्री कृष्ण पति, पुत्र, धन आदि को प्रेम-पथ में बाधक बताते हैं उन्होंने द्वारिका में प्रत्येक रानी से दस दस पुत्र उत्पन्न

किये। जो दूसरों से कहते हैं- ''संसार का त्यागकर ईश्वर की आराधना करो'' उन्होंने अपनी प्रत्येक रानी को स्वर्ण-भवन प्रदान किये। अब तक तो हम इन श्री कृष्ण के छल से छली गईं किंतु अब भविष्य में कभी इनकी बातों में नहीं आवेंगी। श्यामसुन्दर रसिक नहीं है। इनकी वाणी तो मधुर है परन्तु हृदय विष से परिपूर्ण है। '**कृपालु**' सखी से कहते हैं- हे सखी! ऐसा होने पर भी तू श्यामसुन्दर का परित्याग नहीं कर सकती।

६०

मैं तो लुटि गई लुटि गई हाय दैया।
जाने कित गयो लूटि के लुटेरा दैया।
मैं तो यमुना भरन गई घट दैया।
तहँ आयो घूमत झूमत दैया।
वाने कही सुनु सुनु ओरी गोरी दैया।
मैंने घुँघटा उठा के लखा वाय दैया।
वाने जाने कैसे देखा मोहिं हाय दैया।
मैं तो लखतहिं सुधि बुधि खोई दैया।
जब आइ चेतना तो पूछा मैंने दैया।
कहु कहु कहा कहे नटखट दैया।
वाने कही तेरी मैया आई घर दैया।
मेरी मैया ते की कानाफूसी कछु दैया।
पुनि तेरी मैया बोली सुनु लाला दैया।
जा बुला ला मोरी छोरी को अबहिं दैया।

याते चलु तुरतहिं सँग मोरे दैया।
हम दोनों की सगाई भइ पक्की दैया।
यह सुनि रोम-रोम भा विभोर दैया।
पुनि चलि वाय सँग फूली उर दैया।
वाने मग में ही दीने गलबैंया दैया।
अस रस पायो भइ परवश दैया।
पुनि मैंने भी लगायो वाय उर दैया।
भइ मुर्छित गिरि छिति पर दैया।
गइ मुर्च्छा तो देखा चहुँ दिशि दैया।
नहिं दीखा सो 'कृपालु' छलिया दैया॥

भावार्थ— कृष्ण के प्रेम-जाल में फँसी किसी गोपी ने अपनी सखी से बताया-हाय हाय! मैं लुट गई। लुटेरा कृष्ण मुझे लूटकर न जाने कहाँ चला गया? मैं यमुना-तट पर जल भरने के लिये गई थी। वहीं पर घूमता घामता झूमता हुआ कृष्ण आ गया। वह मुझसे बोला-अरी सखी सुन! मैंने मुख से घूँघट उठाकर उसे देखा-उसने न जाने कैसे विचित्र ढंग से मुझे देखा कि उसके देखते ही मेरी सुध बुध खो गई। जब चेतना वापस लौटी तो मैंने पूछा- हे नटखट! तुम क्या कहना चाहते हो? वह उत्तर देने लगा- तेरी माँ ने मेरे घर आकर मेरी माँ से कुछ गुप्त बातें कीं। फिर तेरी माँ ने मुझसे कहा- लाला! तनिक शीघ्र जाकर मेरी लाली को बुला ला। अब तू शीघ्र मेरे साथ चल। मार्ग में कृष्ण ने मुझसे कहा- हम दोनों की सगाई तै हो गई है। इस समाचार ने मेरे रोम रोम को पुलकित कर दिया।

हृदय में फूली न समाती हुई मैं उसके साथ अपने घर की ओर चल दी। मार्ग में कृष्ण ने मेरे कण्ठ में अपनी भुजायें डाल दीं। उस रस को प्राप्त कर मैं पूर्णतः उसके वशीभूत हो गई। मैंने भी उसे अपने हृदय से लगा लिया। आनन्द को सह न सकने के कारण मैं मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ी। मूर्च्छा समाप्त होने पर जब मैंने चारों ओर दृष्टि डाली तो वह कपटी कृष्ण कहीं दिखाई नहीं पड़ा।

६१

मोरिहुँ सुनु टुक मैया, मैया मैया मैया।
तू अति भोरी भारी मैया,
सीधी सादी मैया, मैया मैया मैया।
लँगर कन्हैया तेरो मैया,
पै न मान तू मैया, मैया मैया मैया।
कालि गई रहि यमुना मैया,
आय कन्हैया मैया, मैया मैया मैया।
जल महँ लगी नहाने मैया,
पट चुराय लिये मैया, मैया मैया मैया।
लतन छुपाय दिये पट मैया,
लखि न सक्यों हौं मैया, मैया मैया मैया।
जल बाहर जब आई मैया,
देखा पट नहिं मैया, मैया मैया मैया।
बाहर खरो कन्हैया मैया,

हँसत घूरि मोहिं मैया, मैया मैया मैया।
हौं पूछी मम पट कहँ मैया,
कह्यो कन्हैया मैया, मैया मैया मैया।
आयो इक मोटो कपि मैया,
लै गयो सखि पट मैया, मैया मैया मैया।
जानि गयो यह कपि है मैया,
तेरो ही सुत मैया, मैया मैया मैया।
पुनि कह कहु प्रियतम मोहिं मैया,
तब ला दउँ पट मैया, मैया मैया मैया।
जब 'कृपालु' प्रियतम कह मैया,
दियो मोहिं पट मैया, मैया मैया मैया॥

भावार्थ— किसी ब्रज-गोपी ने कृष्ण की चंचलता बतलाते हुए यशोदा से कहा- अरी मैया! कभी मेरी भी बात सुन लिया करो। तुम तो अत्यन्त ही भोली भाली और सीधी सादी हो। तुम्हारा पुत्र तुम्हारे स्वभाव को प्राप्त नहीं कर सका। कृष्ण तो अत्यन्त ही नटखट है, परन्तु तुम इस बात का कभी विश्वास नहीं करतीं। मैं कल यमुना-तट पर गई थी। वहाँ पर अचानक कृष्ण आ गया। मैं यमुना में प्रवेश कर स्नान करने लगी तो कृष्ण ने मेरे वस्त्र चुराकर लताओं में छिपा दिये। मुझे वस्त्र नहीं मिले। जब मैं जल से बाहर निकली तो तट पर मेरे वस्त्र नहीं थे। तट पर खड़ा हुआ कन्हैया मुझे घूर घूरकर देखकर हँसने लगा। जब मैंने पूछा- मेरे वस्त्र कहाँ हैं? तो बोला- एक मोटा बन्दर तुम्हारे वस्त्र ले गया। वह वानर यह कन्हैया ही था।

फिर कहने लगा–मुझे अपना प्रियतम कह मैं वस्त्र लाकर दे दूँगा। '**कृपालु**' कहते हैं जब मैंने इसे 'प्रियतम' कहा तब इसने मेरे वस्त्र लाकर दे दिये।

६२

ये अस गूजरि मैया, मैया मेरी मैया।
जस कहुँ तीन लोक महँ मैया,
भई, न ह्वैहैं मैया, मैया मेरी मैया।
इन सबने मम चलनो मैया,
दूभर करि दियो मैया, मैया मेरी मैया।
मम पाछे चल सबरी मैया,
जित जाऊँ मैं मैया, मैया मेरी मैया।
डाट खाँय जब निज घर मैया,
मोय सतावें मैया, मैया मेरी मैया।
हौं भोरो इकलो रह मैया,
ये हैं लख लख मैया, मैया मेरी मैया।
झूठहि इनको भोजन मैया,
झूठ व्यसन इन मैया, मैया मेरी मैया।
इनहिं दया नहिं नेकहुँ मैया,
अति दुख दें मोहिं मैया, मैया मेरी मैया।
कैसेहुँ बचि आऊँ जब मैया,
तब आवें इत मैया, मैया मेरी मैया।

झूठहिं देत उरहनो मैया,
दे भगाय इन मैया, मैया मेरी मैया।
कह 'कृपालु' दोउन ही मैया,
अति झूठे सुनु मैया, मैया मेरी मैया।

भावार्थ— बालकृष्ण माता यशोदा से कहते हैं- मैया! ब्रजगोपियों के समान स्त्रियाँ न तो तीनों लोकों में अभी तक हुई हैं न भविष्य में होंगी। इन गोपियों ने तो मेरा ब्रज में घूमना फिरना भी कठिन कर दिया। मैं जिधर जाता हूँ उधर ही ये सब मेरे पीछे पीछे चल देती हैं। जब घर पर इनकी सास ननद आदि इन्हें फटकारती हैं तब ये उनसे तो कुछ कह नहीं सकतीं, मुझे ही तंग करती हैं। मैं तो भोला भाला अकेला रहता हूँ, ये ब्रज गोपियाँ लाखों की संख्या में हैं। इनका भोजन व्यसन सब झूठ का ही है। इनके हृदय में तनिक भी दया का लेश नहीं है। ये मुझे अत्यन्त दुःख देती हैं। जब मैं इनसे अपनी जान बचाकर घर पर आता हूँ तो ये घर पर भी आ जाती हैं। इनके ताने, उलाहने सब झूठे ही हैं। इन्हें अपने घर से भगा दो। **'कृपालु'** कहते हैं- हे यशोदे! तुम्हारा पुत्र कृष्ण एवं गोपियाँ दोनों ही अत्यन्त झूठे हैं। गोपियों की कामना पूर्ण करने कृष्ण उनके घर जाते हैं परन्तु यशोदा के समक्ष यही कहते हैं कि मैं कहीं नहीं जाता; अतः झूठे हैं। गोपियाँ उलाहना देने के बहाने से कृष्ण का दर्शन करने आती हैं, अतः झूठी हैं।

६३

लखि न जात छवि कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
जब जब लखत आव दृग कान्हा,
आनँद जल भरि कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
पल पल पलक ओट कर कान्हा,
मम बैरिनि बनि कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
लखतहुँ यह भय रह नित कान्हा,
छिनि न जाय सुख कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
विरह काल में तो दृग कान्हा,
झर झर बरसत कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
पल कल नहिं बिनु देखे कान्हा,
विकल विरह महँ कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
जितनोई सुख मिल लखि कान्हा,
रूप माधुरी कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तितनोई वियोग महँ कान्हा,
मिलत दुसह दुख कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
रसिकन कहत मिलन ते कान्हा,
सरस विरह रस कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
विरह प्रेम रस ऐसो कान्हा,
जित देखूँ तित कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।
तब सब ही कह मोहिं लखि कान्हा,
आई बावरि कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा।

धरि 'कृपालु' सिर ओखलि कान्हा,
अब न सोचु सखि कान्हा, कान्हा कान्हा कान्हा॥

भावार्थ— एक गोपी अपनी स्थिति को प्रकट कर रही है कि कन्हैया की अनुपम छवि देखी नहीं जाती है। जब जब इस छवि को देखती हूँ तो नेत्र आनन्द जल से परिपूर्ण हो जाते हैं। पलकें भँजने के कारण कन्हैया के दर्शनों में विक्षेप होता है अतः उन्हें बैरिनी की संज्ञा देती है। देखने पर यह भय बना रहता है कि कहीं ये दर्शन-सुख छिन न जाय। वियोगावस्था में तो इन नेत्रों से निरन्तर वर्षा की भाँति झड़ी ही लग जाती है। विरह में दर्शन की व्याकुलता इतनी बढ़ जाती है कि एक क्षण भी दर्शन के बिना नहीं रहा जाता। जितना सुख श्रीकृष्ण के दर्शन में मिलता है उतना ही दुःख उनके विरह में मिलता है। रसिक जनों की मान्यता है कि श्रीकृष्ण के मिलन रस से अधिक सरस विरह का रस होता है कारण कि मिलन में तो अपना प्रिय एक स्थान पर ही दृष्टिगोचर होता है किंतु विरह में (सर्वव्यापक) कण कण में दृष्टिगत होता है। मेरी ऐसी स्थिति को देखकर मुझे सभी लोग पागल घोषित करते हैं। '**कृपालु**' कहते हैं कि हे सखी! जब तूने ओखली में सिर रख ही दिया तो फिर चोट से न घबरा। श्रीकृष्ण से प्रेम कर लिया तो बदनामी मत सोच।

६४

सखि कै गयो बंटाढार यार
हौं कालि लखति रहि यमुन धार।
आयो तहँ झूमत झुकत यार।
पूछ्यो सखि तू इत का निहार।
यह सुनि हौं हूँ सखि लख्यो यार।
सो मोहिं निहार हौं तेहिं निहार।
ह्वै गये मिलि द्वै द्वै दृगन चार।
दिय नैनन सैनन बान मार।
हौं ह्वै गइ घायल सुधि बिसार।
जाने वाने का जादु डार।
जित देखूँ दीखे सोइ यार।
अब विकल न कल पल बिनुहिं यार।
कासों कह है यह प्यार जार।
पुनि पुनि तनु काँपे सोचि यार।
लागे सुत पति सब सुख असार।
कबहुँक दृग आनँद जल फुहार।
कबहुँक दृग विरह अश्रुजल धार।
ज्यों ज्यों बिसरावति सुरति यार।
त्यों त्यों अति आवति सुरति जार।
सखि अब कैसे निज प्राण धार।
कैसे सोइ पुनि मिल मेरो यार।
लै प्राण 'कृपालु' मिलाउ यार।

जा पर दिय तन मन प्रान वार॥

भावार्थ— किसी ब्रजगोपी ने अपनी अन्तरंग सखी से आप बीती घटना का वर्णन करते हुए कहा-अरी सखी! आज तो मेरे प्राणसखा कृष्ण ने मेरा सर्वस्व लूट लिया। मैं कल यमुना के कूल पर खड़ी हुई धारा की ओर देख रही थी। वहाँ अचानक न जाने कहाँ से झुक झुक कर झूमते हुए नंदनंदन आ गये। उन्होंने मुझसे प्रश्न किया- अरी सखी ! तू इधर क्या देख रही है? यह सुनकर मैंने श्री कृष्ण की ओर देखा। वे मुझे देख रहे थे, मैं उन्हें देखने लगी। हमारे नेत्र अचानक चार हो गये। मनमोहन कृष्ण ने अपने नेत्रों के कटाक्ष पात रूपी बाणों से मुझे घायल कर दिया। मैं तन मन की सुधि भूल गई। न जाने उन्होंने मुझ पर क्या जादू कर दिया। अब तो जिधर देखती हूँ, प्रियतम कृष्ण ही दिखाई देते हैं। अब तो प्रियतम के बिना एक क्षण को भी चैन नहीं पड़ता। इस कृष्ण रूपी पर-पुरुष की प्रीति को किसी से कह भी नहीं सकती। प्रियतम का चिंतन कर शरीर बार बार काँपने लगता है। पति-पुत्र का सुख खारा प्रतीत होता है। कभी तो नेत्रों से आनन्द के आँसुओं की झड़ी लग जाती हैं कभी विरह के उष्ण अश्रु झरते हैं। जैसे जैसे प्रियतम को भूलना चाहती हूँ वैसे वैसे और अधिक स्मृति होती है। अब जीवन कैसे व्यतीत करुँगी? मेरा प्राण-प्रियतम पुनः कब किस प्रकार प्राप्त होगा? '**कृपालु**' के शब्दों में सखी अपनी सखी से कहती है- मैंने जिस पर अपना तन, मन, प्राण निछावर किया है- मेरे प्राण लेकर भी कोई मुझे उस प्रियतम से मिला दे।

६५

हैं अस ग्वालिनि मैया, मैया मैया मैया।
जैसी नहिं कहुँ जग महँ मैया,
भई न ह्वैहैं मैया, मैया मैया मैया।
बोलतिं मधुर बैन उर मैया,
कपट कतरनी मैया, मैया मैया मैया।
इत को आ लाला कह मैया,
जब जावूँ तो मैया, मैया मैया मैया।

कहतिं दुहा दे गैया मैया,
घर न मोर पति मैया, मैया मैया मैया।
दुहि के दूध दऊँ जब मैया,
कहतिं दूध कम मैया, मैया मैया मैया।
पुनि कह तू ही पी गयो मैया,
कितनी झूठीं मैया, मैया मैया मैया।
नव लख धेनु हमारे मैया,
दूध पिवूँ कत मैया, मैया मैया मैया।
भारी गोबर टोकरि मैया,
मोहिं उठवावतिं मैया, मैया मैया मैया।
मोहिं कह झूठ दऊँगी मैया,
माखन लौंदा मैया, मैया मैया मैया।
पुनि कह नाच दिखा दे मैया,
तब दउँ माखन मैया, मैया मैया मैया।
नाचि नाचि हौं थकि गयों मैया,
इन कठोर उर मैया, मैया मैया मैया।
आयेहु लाल कालि पुनि मैया,
तब दउँ माखन मैया, मैया मैया मैया।
हौं 'कृपालु' अति निर्बल मैया,
ये सब धींगरि मैया, मैया मैया मैया॥

भावार्थ— श्यामसुन्दर मैया यशोदा से ब्रजगोपियों की शिकायत करते हुए कहते हैं- अरी मैया! इन गोपियों के समान

ढीठ स्त्रियाँ तो संसार में न कहीं हुई हैं न भविष्य में होंगी। मोर की भाँति इनकी वाणी अत्यन्त मधुर है किंतु हृदय में कपट भरा है। पहले यह मुझे प्रेम से अपने घर बुलाती हैं, जब मैं इनके निकट जाता हूँ तब कहती हैं- मेरा पति घर पर नहीं है, लाला! मेरी गैया दुह दो। जब मैं इनकी गाय दुहकर दूध देता हूँ तब कहती हैं- आज दूध कम है। फिर कहती हैं- कन्हैया! तुमने गाय दुहते हुए ही दूध पी लिया है, ये कितनी झूठी हैं! मैया! हमारे घर में नौ लाख गायें हैं, मैं इनकी गाय का दूध क्यों पीऊँगा? कभी ये गोबर की भरी टोकरी मुझसे उठवाती हैं- ये कहती हैं- मैं माखन का लौंदा दूँगी। जब गोबर की टोकरी उठवाकर मैं माखन माँगता हूँ तब कहती हैं- नाचो तब माखन मिलेगा। मैं नाचते नाचते थक गया परन्तु इस गोपी ने मुझे माखन नहीं दिया। कहने लगीं-कल आना तब माखन दूँगी। इनका हृदय कितना कठोर है! '**कृपालु**' के शब्दों में कन्हैया मैया से कहते हैं- मैं तो छोटा हूँ दुर्बल भी हूँ, ये बड़ी हैं, अतः मैं इनसे कैसे जीत सकता हूँ।

६६

अति गूढ़ तत्व राधा, नहिं जान श्रुतिहुँ राधा,
कह नेति नेति राधा, सोइ मम स्वामिनि राधा।
वारी रति लखि राधा, वारी छवि लखि राधा,
वारी हरि लखि राधा, सोइ मम स्वामिनि राधा।
गति गजगामिनि राधा, छवि अभिरामिनि राधा,
तनु दुति दामिनि राधा, सोइ मम स्वामिनि राधा।
आनँद घन तन राधा, अति गौर वरन राधा,
पिय मन मोहिनि राधा, सोइ मम स्वामिनि राधा।
चाकर हरि जेहि राधा, सेवत हरि जेहि राधा,
ध्यावत हरि जेहि राधा, सोइ मम 'कृपालु' राधा।

भावार्थ— श्री राधा के रहस्यपूर्ण तत्व को न जानने के कारण ही वेद उनके विषय में "नेति नेति" कहकर मौन हो जाते हैं। ऐसी श्री राधा ही मेरी स्वामिनी हैं। जिन्हें नेत्रों से एक बार देखकर काम पत्नी- रति स्वयं को निछावर कर देती है। स्वयं छवि जिनकी छवि पर बलिहार जाती है। मूर्तिमान रूप श्री हरि भी जिनके रूप पर स्वयं को निछावर करते हैं, वे ही श्री राधा मेरी स्वामिनी है। श्री राधा की चाल मत्त कुंजर की चाल के समान है। श्री राधा की छवि अत्यन्त आकर्षक है। श्री राधा के दिव्य गौर तन का तेज विद्युत के प्रकाश जैसा है, ऐसी श्री राधा ही मेरी स्वामिनी हैं। श्री राधा का चिन्मय वपु आनन्दघन रूप है। शरीर का वर्ण अत्यन्त गौर है, प्रियतम के मन को मोहित करने वाली श्री राधा ही मेरी स्वामिनी हैं। जिन श्री राधा के सेवक स्वयं श्री कृष्ण हैं, जिनकी सेवा निरन्तर श्री हरि सावधान रहकर करते हैं, जिनका ध्यान श्री कृष्ण करते हैं, वे ही कृपामयी श्री राधा मेरी स्वामिनी है।

६७

करु सुमिरन मन राधे, राधे राधे राधे।
इन्द्रिन भजन न मानतिं राधे,
भजन मान मन राधे, राधे राधे राधे।
गावु नाम लीला गुन राधे,
किन्तु ध्यान करु राधे, राधे राधे राधे।

करहु कर्म केवल हित राधे,
जेहि प्रसन्न हों राधे, राधे राधे राधे।
गहहु ज्ञान यह को हैं राधे,
हैं हमारि को राधे, राधे राधे राधे।
योग इहै, कब मिलिहैं राधे,
सोचु मनहिं मन राधे, राधे राधे राधे।
जो कछु करु सब करु हित राधे,
बिसरहु जनि पल आधे, राधे राधे राधे।
भुक्ति मुक्ति जनि चहु ढिग राधे,
चहहु प्रेमरस राधे, राधे राधे राधे।
बैकुण्ठहुँ सुख जनि चहु राधे,
तहँ नहिं ब्रजरस राधे, राधे राधे राधे।
चहहु 'कृपालु' सदा सुख राधे,
राखहु रुचि रुचि राधे, राधे राधे राधे॥

भावार्थ—हे मेरे मन! तू श्री राधा का स्मरण कर। इन्द्रियों की क्रिया (बिना मन के अनुराग के पूजा, वन्दन आदि) का विशेष महत्व नहीं है। ईश्वर के यहाँ मन के स्मरण का ही महत्व है। "मन एव मनुष्याणां कारणं बंध मोक्षयो:।" रसना से श्री राधा के नाम, लीला गुणादि का गायन करो किन्तु मन से श्री राधा के अलौकिक रूप का ध्यान करना परमावश्यक है। शरीर से वही कर्म करो जिससे श्री राधा प्रसन्न हों। "तत्कर्म हरितोषं यत्।" श्री राधा कौन हैं? इस तत्व का ज्ञान प्राप्त करो। श्री राधा से हमारा क्या सम्बंध है? इसे जानो। मन ही मन इस

प्रकार का चिंतन करना कि श्री राधा मुझे कब मिलेंगी? यही योग है। एक क्षण का भी विस्मरण न होने पावे। शरीर की प्रत्येक क्रिया भी श्री राधा के हेतु ही हो। श्री राधा से कभी ब्रह्मलोकपर्यन्त के भोग एवं पाँच प्रकार की मुक्तियाँ न माँगो। एकमात्र प्रेमभिक्षा ही माँगो। जिस वैकुण्ठ में ब्रज-रस का अभाव है, वह वैकुंठ भी श्री राधा से न माँगो। भक्त की प्रत्येक कामना श्री राधा के सुख के लिये ही हो। प्रेमी-जनों को तो सदैव श्री राधा की रुचि में ही रुचि रखनी है।

६८

गावो गुन गन राधा, ध्यावो छविनिधि राधा,
जावो जहँ रह राधा, जय जयति जयति राधा।
जपु नित्य नाम राधा, सुनु नित्य कथा राधा,
गहु चरण शरण राधा, जय जयति जयति राधा।
विधि भजत नित्य राधा, हरि भजत नित्य राधा,
हर भजत नित्य राधा, जय जयति जयति राधा।
सनकादिक भज राधा, जनकादिक भज राधा,
भज नारदादि राधा, जय जयति जयति राधा।
अग जग व्यापक राधा, सब उरपुर रह राधा,
सब पर करुणा राधा, जय जय 'कृपालु' राधा।

भावार्थ— भक्त कवि अपने मन से कहता है- हे मेरे मन! तू निरन्तर श्रीराधा का ही गुणगान कर। छवि की अगाध

समुद्र श्री राधा का ही ध्यान कर। जहाँ श्रीराधा वास करती हैं, वहीं तू भी विचरण कर। श्रीराधा की सदैव विजय हो। निरन्तर श्रीराधा नाम का जप कर। श्रवणों से सतत् श्रीराधा-कथामृत का पान कर। श्रीराधा के ही युगल चरणों की शरण ग्रहण कर। श्रीराधा सदा जय प्राप्त करें। ब्रह्मा निरन्तर श्रीराधा का ही सेवन करते हैं। विष्णु एवं शिव भी सदा श्रीराधा की ही सेवा वासना रखते हैं, ऐसी श्रीराधा सदा ही विजयिनि हों। सनकादि परमहंस गण, जनक आदि ज्ञानी जन एवं नारद जैसे भागवत भी श्रीराधा का स्मरण, वन्दन आदि करते हैं। आह्लादिनी शक्तिरूपा श्रीराधा जड़-चेतन सम्पूर्ण जगत् में व्यापक हैं। सभी प्राणियों के हृदय में उनका निवास है। सभी जीव समान रूप से श्रीराधा की करुणा के अधिकारी हैं, ऐसी श्रीराधा सर्वदा जय को प्राप्त हों।

६९

गावो सब हिलिमिलि राधे, राधे राधे राधे।
थकहु नाम गाते जब राधे,
श्वास श्वास जपु राधे, राधे राधे राधे।
जब थकि जाहु तबहुँ तो राधे,
सुमिरिय नित छवि राधे, राधे राधे राधे।
करहु कीर्तन या जप राधे,
ध्यान सहित करु राधे, राधे राधे राधे।
एक ध्यान करु मन महँ राधे,
खड़ीं सामने राधे, राधे राधे राधे।

दूजो ध्यान करहु नित राधे,
मिलइँ वेगि अब राधे, राधे राधे राधे।
निज गुरु इष्ट भक्ति में राधे,
रहु अनन्य मति राधे, राधे राधे राधे।
रह दुर्भाव न कतहूँ राधे,
उदासीन रहु राधे, राधे राधे राधे।
सब महँ रह 'कृपालु' तव राधे,
इहै भाव रखु राधे, राधे राधे राधे।

भावार्थ— सन्त कवि जीवों को उद्‌बोधन देते हुए कहते हैं- हे जीवों! प्रेमपूर्वक राधा नाम का गायन करो। जब नाम गाते गाते श्रान्ति का अनुभव हो तब प्रत्येक श्वास से 'राधा' नाम का जप करो। जब जप करते हुए श्रम प्रतीत हो तब श्री राधा की दिव्य रूपमाधुरी का स्मरण, ध्यान करो। नाम-संकीर्तन करो नाम जप रूपध्यान सहित ही करना चाहिये। मानसिक ध्यान करना चाहिये- मेरे नेत्रों के समक्ष श्री राधा विराजमान हैं। पुनः यह भाव लाना चाहिये कि मुझे अविलम्ब श्री राधा का दर्शन, स्पर्श आदि प्राप्त हो। अपने गुरु, इष्ट एवं भक्ति में अनन्य बुद्धि रहनी चाहिये। मेरी कृपामयी राधा का सभी में निवास है, ऐसा भाव सदा रखना चाहिये।

७०

तू ही मेरी राधा, मैं भी तेरी राधा,
मै हूँ चेरी राधा, मेरी प्यारी राधा।

जब चल सखि सँग राधा, पिय बोलत जय राधा,
कर हरि स्वागत राधा, मेरी प्यारी राधा।
आसीन सेज राधा, पिय चापत पग राधा,
छुपि छुपि लख सखि राधा, मेरी प्यारी राधा।
लै श्याम संग राधा, वृन्दावन बिच राधा,
कर रास सरस राधा, मेरी प्यारी राधा।
जब मान करति राधा, हरि काँपत लखि राधा,
सखि दे मनाय राधा, मेरी 'कृपालु' राधा।

भावार्थ— भक्त कहता है- हे श्री राधे! मेरी तो एकमात्र तुम ही हो। मैं भी एकमात्र तुम्हारी ही हूँ। राधे! सबकी एकमात्र तुम ही हो। सखियों सहित चलती हुई राधा का दर्शन कर प्रियतम उच्च स्वर से श्री राधा की जय जयकार करते हुए उनका स्वागत करते हैं। मेरी परम प्रिय राधा जब पुष्प शैया पर आरूढ़ होती हैं तब प्रियतम कृष्ण धीरे धीरे उनके चरणों का संवाहन करते हैं। सखियाँ इस दृश्य का दर्शन छिप छिपकर करती हैं। श्री राधा प्रियतम कृष्ण को अपने साथ लेकर वृन्दावन की दिव्य भूमि पर सरस रास-रस की वर्षा करती हैं। मानिनी राधा जब मान ठानती हैं, तब तो श्री हरि उनकी उस छवि को देखकर काँप जाते हैं। सखियाँ श्री हरि के कष्ट को न सह सकने के कारण कृपामयी राधा को अपनी चातुरी से मना लेती हैं। मेरी राधा ऐसी गुणमयी एवं '**कृपालु**' हैं।

७१

छिन छिन भज मन राधे, राधे राधे राधे।
ब्रह्मा विष्णु शंभु भज राधे,
सनकादिक भज राधे, राधे राधे राधे।
उमा रमा हूँ नित भज राधे,
जनकादिक भज राधे, राधे राधे राधे।
परमहंस शुकदेवहुँ राधे,
मुर्छित हों सुनि राधे, राधे राधे राधे।
अष्ट सखिन ललितादिक राधे,
अष्टयाम भज राधे, राधे राधे राधे।
ब्रज की सब ब्रजबनितनि राधे,
काज करत भज राधे, राधे राधे राधे।
ब्रह्म ज्ञानी ध्यानी राधे,
ब्रज तरु बनि भज राधे, राधे राधे राधे।
साधन सिद्ध मुक्त भज राधे,
नित्य सिद्ध भज राधे, राधे राधे राधे।
औरन की का कहिये राधे,
ब्रह्म श्याम भज राधे, राधे राधे राधे।
रूपध्यानयुत मुरलिहिं राधे,
गावत गुन गन राधे, राधे राधे राधे।
शरणागत पतितन कहँ राधे,
पावन कर द्रुत राधे, राधे राधे राधे।

मन 'कृपालु' तू भी भज राधे,
भुक्ति मुक्ति तज राधे, राधे राधे राधे॥

भावार्थ— भक्त कहता है- हे मेरे मन! तू क्षण क्षण श्री राधा माधुरी (नाम, रूप, लीला, गुण, धाम आदि) का ही अवलम्बन ले। साधारण जीव की तो बात ही क्या- स्वांश- ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव भी निरन्तर श्री राधा के ही चरणों का चिन्तन करते हैं। सनकादि ब्रह्मर्षि गण भी श्री राधा के शरणागत रहते हैं। शिव की शक्ति उमा, विष्णु की अर्धांगिनी लक्ष्मी भी श्री राधा शक्ति पर आधारित हैं। विदेह जनक ने भी सीता के रूप में श्री राधा का ही लालन किया। परमहंस शुकदेव भी निरन्तर समाधि में अपने मन को लीन कर श्री राधा चरणाम्बुज की ही उपासना करते हैं। अंगभूता ललितादिक अष्ट सखियाँ निरन्तर निशिदिन श्री राधा का ही सेवन करती हैं। ब्रज में अवतीर्ण हुई ब्रज गोपियों ने भी अपने जीवन में इसी आदर्श की स्थापना की- "या दोहने वहनने-----।" ब्रह्मज्ञानियों एवं ध्यान योगियों ने ब्रज में वृक्ष बनकर श्री राधा की आराधना की। जो साधना द्वारा सिद्ध बने हैं तथा जो जीवन्मुक्त पुरुष हैं, वे भी अपनी गति मति श्री राधा पादारविंद में अर्पित कर उनका स्मरण, वंदन करते हैं। नित्य सिद्ध जन भी श्री राधा शक्ति की उपासना करते हैं। सर्वेश्वर श्री कृष्ण भी प्राणाधिष्ठात्री देवी श्री राधा के चरणों की शरण ग्रहण करते हैं तब अन्य किसी के लिये श्री राधा महारानी की शरण के अतिरिक्त और क्या

अवलम्ब हो सकता है? प्राणों के प्राण श्री कृष्ण श्री राधा की रूप माधुरी का सतत् चिंतन करते हुए अपनी मोहिनी मुरली में प्रिया राधा के दिव्य गुण-गणों का गान करते हैं। करुणामयी राधा अपने शरणागत पतितों को अविलम्ब पावन बना लेती हैं। '**कृपालु**' कहते हैं कि हे मेरे मन! तू ब्रह्मलोक पर्यन्त के अल्प सुखो की कामना का परित्याग कर तथा मुक्ति-सुख को भी तजकर श्री राधा का स्मरण कर।

७२

राधा सम हैं राधा, जेहि हरिहूँ आराधा,
रस अम्बुधि हैं राधा, सोइ मम रानी राधा।
लाजति रति लखि राधा, लाजति छवि लखि राधा,
उपमा नहिं छवि राधा, सोइ मम रानी राधा।
हैं कृपासिंधु राधा, हैं दीनबंधु राधा,
हैं प्रेमसिंधु राधा, सोइ मम रानी राधा।
भज रमा नित्य राधा, भज उमा नित्य राधा,
भज ब्रह्माणी राधा, सोइ मम रानी राधा।
हैं ब्रजरानी राधा, हैं ठकुरानी राधा,
हैं सुखदानी राधा, सोइ मम 'कृपालु' राधा।

भावार्थ— भक्त श्री राधा-यश का गान करते हुए कहता है- श्री राधा की समता करने वाली तो एकमात्र श्री राधा ही हैं। जिनकी आराधना स्वयं श्री हरि भी करते हैं। मेरी राधा रानी रस का समुद्र ही हैं। सौन्दर्य की अधिष्ठात्री रति राधा का दर्शन

कर लज्जित हो उठती है। साक्षात् छवि भी राधा की छवि को देखकर लजा जाती है। राधा की छवि की कोई उपमा नहीं दी जा सकती। ऐसी श्री राधा ही मेरी स्वामिनी हैं। श्री राधा कृपा का समुद्र हैं, श्री राधा दीन वत्सला हैं। श्री राधा प्रेम सिंधु स्वरूपा ही हैं। ऐसी श्री राधा मेरी स्वामिनी हैं। वैकुण्ठ की अधिष्ठात्री महालक्ष्मी, शिव की शक्ति उमा तथा ब्रह्माणी सावित्री निरन्तर श्री राधा का ही स्मरण वंदन क़रती हैं। सभी शक्तियाँ श्री राधा-चरणों की उपासना करती हैं। श्री राधा ब्रज मंडल की स्वामिनी हैं। श्री राधा श्री कृष्ण की भी आराध्या हैं। जीवों को सुख प्रदान करने वाली भी एकमात्र श्री राधा ही हैं। ऐसी **'कृपालु'** श्री राधा ही एकमात्र मेरी स्वामिनी हैं।

७३

हैं प्रेमसुधा राधा, हैं रूपसुधा राधा,
हैं महाभाव राधा, हैं पूर्णब्रह्म राधा।
हैं अद्वितीय राधा, हैं पराशक्ति राधा,
हैं आह्लादिनि राधा, हैं पूर्णब्रह्म राधा।
हैं कृपा रूप राधा, हैं रूप रूप राधा,
हैं रस स्वरूप राधा, हैं पूर्णब्रह्म राधा।
हैं पर ते पर राधा, हैं सबके उर राधा,
हैं अति 'कृपालु' राधा, हैं पूर्ण ब्रह्म राधा।

भावार्थ— श्री राधा प्रेमामृत से परिपूर्ण हैं। रूप रस से

परिपूर्ण हैं। श्री राधा साक्षात् महाभाव स्वरूपा हैं। श्री राधा ही स्वयं साक्षात् पूर्ण ब्रह्म हैं। श्री राधा अद्वितीय तत्व हैं। परा शक्ति स्वरूपा हैं। श्री कृष्ण को भी आनन्द प्रदान करने वाली आह्लादिनी शक्ति श्री राधा ही हैं। श्री राधा मानो कृपा का ही साकार रूप हैं। रूप को भी रूप प्रदान करने वाली श्री राधा ही हैं। श्री राधा रस स्वरूपा हैं। श्री राधा परिपूर्णतम ब्रह्म स्वरूपा ही हैं। श्री राधा परात्पर तत्व हैं। श्री राधा का निवास सबके हृदय में है। श्री राधा अत्यन्त ही '**कृपालु**' हैं। श्री राधा ही पूर्णब्रह्म हैं।

७४

अति भोरी भारी मेरी प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
विविध मणिन मंडित सिर प्यारी,
कनक मुकुट छवि न्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
शीशफूल शोभा छवि न्यारी,
वेणी कुसुम सँवारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
कजरारी अँखियन बिच प्यारी,
काजर रेखु सँवारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
अति रसभरी बिलोकनि प्यारी,
लखि वारी बनवारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
कानन कर्णफूल दुति प्यारी,
नथ मोतिन लर वारी, प्यारी प्यारी प्यारी।

बेसर झलकनि हलकनि प्यारी,
चूनरि जरिन किनारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
मणि कंकण चूरिन छवि न्यारी,
मुँदरिन दुति अति प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
वरद हस्त मुद्रा छवि न्यारी,
करतल मेहँदी प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
गर हीरन हारन दुति प्यारी,
लर मोतिन छवि न्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
नीली सारी कंचुकि प्यारी,
मणि किंकिणि छवि न्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
पग पायल रुनझुन धुनि प्यारी,
जब चल गति मतवारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
चरण मिहावरि अति अरुणारी
अँगुरिन बिछुवनि प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
लखि 'कृपालु' मम प्यारी प्यारी
मुर्छित गिर बनवारी, प्यारी प्यारी प्यारी।

भावार्थ— भक्त अपनी इष्टदेवी श्री राधा के प्रति अपने हृदयोद्‌गार प्रकट करते हुए कहता है-मेरी प्यारी राधा अत्यन्त ही भोली भाली हैं। श्री राधा के शीश पर अनेक प्रकार की मणियों से जटित स्वर्ण मुकुट शोभा पा रहा है। शीशफूल नामक आभूषण अनूठी छवि को प्राप्त हो रहा है। सखियों द्वारा सँवारी हुई वेणी सुमन द्वारा गुम्फित है। सहज कजरारे नेत्रों में काजल

की रेखा सँवारी गई है। श्री राधा के नेत्रों की रसपूर्ण चितवनि को निहारकर प्रियतम कृष्ण स्वयं को निछावर करते हैं। श्री राधा के कानों में कर्णफूल नामक आभूषण दमक रहे हैं। नासिका में धारण की हुई नथ के मोतियों की लड़ को निरखकर सखियाँ बलिहार जाती हैं। बेसर का हिल हिलकर झलमलाना बड़ा ही भला प्रतीत होता है। जरी के किनारे की चुनरी की शोभा भी न्यारी ही है। युग करों में मणियों से जड़े हुए कंकणों एवं चूड़ियों की अनुपम छवि दर्शनीय है। उँगलियों में अँगूठियाँ जगमगा रही हैं। श्री राधा के वरद हस्त-कमल की मुद्रा अलौकिक करुणा को विकीर्ण कर रही है। कर-तल मेहँदी की लालिमा से युक्त हैं। कम्बु-कण्ठ हीरों के हार की श्वेत आभा से युक्त है। मोतियों के हार अपना प्रकाश प्रसारित कर रहे हैं। नील वर्ण की साड़ी श्री राधा के गौर वर्ण पर अति सुन्दर लग रही है। वक्ष कंचुकी से आवृत है। सूक्ष्म कटि प्रदेश पर मणियों से जड़ी हुई किंकिणी शोभायमान है। चरणों में पायल की मधुर रुनझुन ध्वनि हो रही है। चरणों में अरुण मिहावर छवि पा रहा है। उंगलियों में बिछुवों की अद्भुत शोभा है। **'कृपालु'** कहते हैं- सोलह शृंगार से युक्त मेरी स्वामिनी को निरखकर श्यामसुन्दर मूर्च्छा को प्राप्त हो जाते हैं।

७५

अनुपमेय श्री राधे, राधे राधे राधे।
श्री वृषभानु दुलारी राधे,
कीर्ति कुमारी राधे, राधे राधे राधे।
धाम दिव्य बरसानो राधे,
भई प्रकट जहँ राधे, राधे राधे राधे।
भोरी भारी प्यारी राधे,
ब्रजरस वारी राधे, राधे राधे राधे।
आनंदहुँ दें आनँद राधे,
रसहूँ दें रस राधे, राधे राधे राधे।
मादन महाभाव तनु राधे,
प्रेम सुधा निधि राधे, राधे राधे राधे।
चिदघन आनँदघन श्री राधे,
गौर बरन तन राधे, राधे राधे राधे।
बह प्रति रोम प्रेमरस राधे,
जेहि पिय पिय नित राधे, राधे राधे राधे।
सेवत रसिक शिरोमणि राधे,
ब्रह्म श्यामहूँ राधे, राधे राधे राधे।
चूमत चरण कमल नित राधे,
चह पिय पद रज राधे, राधे राधे राधे।
जपत रैन दिन राधे राधे,
धरत ध्यान छवि राधे, राधे राधे राधे।
सिंहासन बैठें जब राधे,

पिय चापत पग राधे, राधे राधे राधे।
पिय 'कृपालु' ही अनुपम राधे,
पुनि का उपमा राधे, राधे राधे राधे॥

भावार्थ— भक्त महरानी राधा का गुणगान करते हुए कहता है- हे श्री राधे! तुम्हारे समान तो एकमात्र तुम ही हो। हे वृषभानुनन्दिनी! हे कीर्ति कुमारी! तुम अनुपम हो। दिव्य बरसाना धाम में नित्य निकुंजेश्वरी श्री राधा का प्राकट्य हुआ। ब्रजरस की वर्षा करने वाली प्यारी राधा अत्यन्त ही भोली भाली हैं। श्री राधा आनन्द को भी आनन्द एवं रस को भी रस देने वाली हैं (आनन्द एवं रसरूप श्री कृष्ण भी श्री राधा द्वारा आनन्द एवं रस प्राप्त करते हैं) प्रेमामृत की सिंधु स्वरूपा श्री राधा का दिव्य वपु मादन महाभाव का साकार रूप ही है। चिदानन्द-घनरूपा श्री राधा गौर वर्ण वाली हैं। श्री राधा के रोम रोम से प्रेम-रस की वर्षा होती रहती है जिसे प्रियतम श्री कृष्ण निरन्तर पान करते हैं। रसिक शिरोमणि ब्रह्म श्री कृष्ण भी निरन्तर श्री राधा शक्ति की आराधना करते हैं। प्रियतम श्री राधा की चरण-रज प्राप्त करने हेतु उनके पावन चरण-कमलों को अपने मुख-कमल से चूमते हैं। निशि-दिन राधा नाम का जप करते हुए श्री कृष्ण उनकी दिव्य रूपमाधुरी का ध्यान करते हैं। सिंहासनारूढ़ श्री राधा के चरण-कमलों को निज अंक में धारण कर उनका संवाहन कर श्री कृष्ण निज सौभाग्य की सराहना करते हैं। **'कृपालु'** कहते हैं जब श्री कृष्ण ही अनुपम हैं तब श्री राधा की उपमा भला किससे दी जा सकती है।

७६

अस सुकुमारी प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
योगिहुँ चह पद रज बनवारी,
सोउ चह पद रज प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
मदनहुँ मन मोहन बनवारी,
तिन मन मोहिनि प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
सुखहुँ देत सुख जो बनवारी,
पावत दुख बिनु प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
वा पर बलिहारी बनवारी,
जो भज प्यारी प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
वाके पाछे चल बनवारी,
जासु प्यार पद प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
पाछे चल सँग सँग बनवारी,
गावत गुनगन प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
अइहैं आपु भाजि बनवारी,
भज मन निशिदिन प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
कबहुँ 'कृपालु' पक्ष बनवारी,
पक्ष नित्य मम प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।

भावार्थ— मेरी सुकुमारी राधा का गौरव अद्भुत है। जिन श्री कृष्ण की चरण-रज को योगीजन भी चाहते रहते हैं, वे ही श्री कृष्ण प्रिया राधा की पावन पद-रज प्राप्त करने को सदा लालायित रहते हैं। मनमोहन श्रीकृष्ण कामदेव के मन को

भी मोहित करने में समर्थ हैं परन्तु श्री राधा उन श्री कृष्ण के मन को भी मोहित कर लेती हैं। सुख को भी सुख प्रदान करने वाले श्री कृष्ण बिना राधा के अत्यन्त दुखित हो जाते हैं। जो भक्त-जन श्री राधा का स्मरण, वंदन करते हैं, उन पर श्री कृष्ण अपना सर्वस्व निछावर करते हैं। जो भी प्राणी श्री राधा पादारविंद में अपनी प्रीति जोड़ते हैं, श्री कृष्ण सदा उनके पीछे पीछे चलते हैं। जब भक्त श्री राधा का गुणगान करते हैं तब श्री कृष्ण उनके अनुगत हो जाते हैं। अरे मन! तू निरन्तर श्री राधा की भक्ति कर। श्री कृष्ण तो स्वतः ही भागकर तेरे निकट आ जायेंगे। '**कृपालु**' कहते हैं कि हम तो नित्य ही श्री राधा के पक्ष में रहते हैं। कभी कभी श्री कृष्ण के पक्ष में भी हो जाते हैं।

७७

मेरी बरसाने वारी प्यारी, प्यारी मेरी प्यारी।
जा पर वारी सब ब्रजनारी,
पिय वारी लखि प्यारी, प्यारी मेरी प्यारी।
मदन विमोहन हैं बनवारी,
उनहुँन मोहिनि प्यारी, प्यारी मेरी प्यारी।
भूरि भाग्य मानत बनवारी,
पाय चरण रज प्यारी, प्यारी मेरी प्यारी।
मुरलिहिं गावत नित बनवारी,
अगनित गुन गन प्यारी, प्यारी मेरी प्यारी।

मानिनि मान जानि बनवारी,
रोवत धरि पग प्यारी, प्यारी मेरी प्यारी।
लखत रहत नित प्रति बनवारी,
प्यारी छवि अति प्यारी, प्यारी मेरी प्यारी।
सेवा माँगत नित बनवारी,
चापन हित पग प्यारी, प्यारी मेरी प्यारी।
करहु 'कृपालु' कृपा सुकुमारी,
मोहूँ पर अब प्यारी, प्यारी मेरी प्यारी।

भावार्थ— मेरी बरसाने में वास करने वाली राधा की छवि देखकर सभी ब्रज गोपियाँ स्वयं को निछावर करती हैं। प्रियतम कृष्ण श्री राधा को निहारते ही रहते हैं। उन पर बलिहार जाते हैं। श्री कृष्ण तो कामदेव को मोहित करने वाले हैं परन्तु श्री राधा तो उन मदन-मोहन को भी मोह लेती हैं। जब श्री कृष्ण को भाग्य से कभी श्री राधा चरणतल से स्पर्श की हुई रज प्राप्त होती है तो वे स्वयं को कृतार्थ मानते हैं। मुरली में निरन्तर श्री राधा के अनन्त गुणों का गान किया करते हैं। जब मानिनी राधा प्रियतम से मान करती हैं तब प्रिया के चरणों में सिर रखकर रो रोकर उन्हें मनाते हैं। श्री राधा की मनमोहक छवि का सदा ही अपलक नेत्रों से पान करते रहते हैं। निज करों से श्री राधा के कोमल चरणों को दबाने की सेवा प्राप्त करने के लिये तो सखियों से सदा अनुनय विनय करते रहते हैं। '**कृपालु**' कहते हैं- हे सुकुमारी राधे! अब तो मुझ पर भी अपनी कृपा करो।

७८

रूप रूप रस राधे, राधे राधे राधे।
मूर्तिमान रूपहिं दे राधे,
रूपमाधुरी राधे, राधे राधे राधे।
मूर्तिमान रसहूँ दे राधे,
रसहुँ सरस रस राधे, राधे राधे राधे।
नहिं कोउ अस नर नारी राधे,
जो न मोह लखि राधे, राधे राधे राधे।
सब जग मोहिनि रतिहूँ राधे,
मोहित हो लखि राधे, राधे राधे राधे।
मदनमोहनहुँ लखि छवि राधे,
भूलत तनु सुधि राधे, राधे राधे राधे।
रुदन करत कहि कहि हा राधे,
मान करति जब राधे, राधे राधे राधे।
ब्रह्म श्यामहूँ महलन राधे,
देत बुहारी राधे, राधे राधे राधे।
दर्शन हित तरसत नित राधे,
विधि हरि हर सुर राधे, राधे राधे राधे।
करि सोरह सिँगार जब राधे,
चलति सखिन सँग राधे, राधे राधे राधे।
सात्विक भाव आठहूँ राधे,
प्रकटत पिय तनु राधे, राधे राधे राधे।
लखि 'कृपालु' कह 'जय हो' राधे,
'जय हो' 'जय हो' राधे, राधे राधे राधे।

भावार्थ— श्री राधा रूप को भी रूप एवं रस को रस प्रदान करने वाली हैं। श्यामसुन्दर रूप एवं रस के साकार स्वरूप हैं परन्तु श्री राधा उन्हें भी अपनी रूप माधुरी से मोह लेती हैं। रस रूप रासेश्वर को रासेश्वरी राधा अत्यन्त सरस रस प्रदान करती हैं। विश्व में ऐसा कोई नर-नारी नहीं जो श्री राधा की छवि को निहार कर मोहित न हो जाय। काम की पत्नी रति समस्त जगत् को मोह लेती हैं, वह भी श्री राधा की अतुलनीय रूपराशि को निहारकर मोहित हो जाती हैं। कामदेव को मोहित करने में सक्षम श्री कृष्ण भी श्री राधा के सौन्दर्य पर मोहित होकर अपने शरीर की सुध बुध भूल जाते हैं। जब मानिनी राधा कभी रूठ जाती हैं तब 'हा राधे' कह कहकर मदन मोहन कृष्ण के रंग महल में बुहारी देकर स्वयं को बड़भागी अनुभव करते हैं। ब्रह्मा, विष्णु एवं शिवादि देवगण श्री राधा के दर्शन हेतु तरसते ही रहते हैं। षोडश शृंगारयुक्त महरानी राधा का जब सखियों सहित आगमन होता है तब प्रियतम के दिव्य शरीर में आठों सात्विक भाव (स्तम्भ, स्वेद आदि)प्रकट हो जाते हैं। '**कृपालु**' कहते हैं- ऐसी गुण-गरिमामयी स्वामिनी को देखकर हम भी जय-जयकार कर उठते हैं।

७९

भोरी भारी प्यारी प्यारी प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
श्री वृषभानु दुलारी प्यारी,

वारी रति लखि प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
श्री बरसाने वारी प्यारी,
वारी छवि लखि प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
चूनरि बेसर वारी प्यारी,
वारी पिय लखि प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
नख सिख किय सिँगार भल प्यारी,
नथ मोतिन लर प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
नील बसन कंचुकि छवि प्यारी,
गर लर मुक्तन प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
कर कंकन चूरिन धुनि प्यारी,
पग बिछुवनि छवि प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
बैठीं मंजु निकुंजनि प्यारी,
पिय चापैं पग प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
अष्ट सखिन सँग जब चल प्यारी,
पिय कह 'जय हो प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
बलिहारी 'कृपालु' मम प्यारी,
प्यारी सम हैं प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी॥

भावार्थ— प्यारी वृषभानु दुलारी अत्यन्त ही भोली भाली हैं। श्री बरसाने वाली राधा की छवि देखकर रति बलिहार जाती है। शीश पर चूनरि एवं नाक में बेसर धारण करने वाली राधा की प्यारी छवि देखकर स्वयं छवि भी स्वयं को निछावर करती हैं। नख शिख से सोलह शृंगार धारण किये हुए श्री राधा को देखकर श्री कृष्ण भी बलिहार जाते हैं। श्री राधा की नासिका

में मोतियों की लड़युक्त नथ सुशोभित है। नीले रंग का अधोवस्त्र है। वक्ष:स्थल पर कंचुकी शोभा पा रही है। हाथों में कंकण शोभा पा रहे हैं। हाथों में कंकण एवं चूड़ियों की खनखनाहट है। चरणों में बिछुए धारण किये हैं जो अत्यन्त सुन्दर प्रतीत होते हैं। श्री राधा सुन्दर निकुंज के मध्य विराजमान हैं। प्रियतम कृष्ण उनके चरण दबा रहे हैं। ललिता, विशाखा आदि अष्ट सखियों सहित जब श्री राधा कहीं जाती हैं, तब प्रियतम उनकी जय जयकार करते हैं। '**कृपालु**' कहते हैं- मेरी प्यारी राधा के समान तो एकमात्र राधा ही हैं। मैं उन पर बलिहार जाता हूँ।

८०

अति प्यारी छवि प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
चंपक वरनि गौर तनु वारी,
भानुदुलारी प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
चारु चंद्रिका चमकति प्यारी,
वेणी सुमन सँवारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
हाटक मुकुट चटक छवि न्यारी,
लर मोतिन बलिहारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
कानन कर्णफूल छवि प्यारी,
नथ बेसर छवि न्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
अँखियाँ अति मतवारी प्यारी,
चितवनि भोरी भारी, प्यारी प्यारी प्यारी।

कर कंकन चूरिन छवि प्यारी,
मुँदरिन दुति छवि न्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
अंबर नील कंचुकी प्यारी,
लर मोतिन छवि न्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
कनकन किंकिनि धुनि मनहारी,
पग पायल झनकारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
पग अँगुरिन बिछुवनि छवि न्यारी,
अरुण मिहावरि प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
लजत हंस लखि गति मतवारी,
मुर्छित हों बनवारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
ब्रज रस चुवत रोम प्रति प्यारी,
पियत जूथ ब्रजनारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
कहँ लौं कह 'कृपालु' छवि प्यारी,
लखि प्यारिहुँ बलिहारी, प्यारी प्यारी प्यारी॥

भावार्थ— भक्त कवि अपनी इष्टदेवी श्री राधा की दिव्य रूप-माधुरी का वर्णन करते हुए कहता है- मेरी प्यारी राधा की छवि अत्यन्त ही मनभावनी है। वृषभानुनन्दिनी राधा का गौर वर्ण चम्पा के पुष्प के समान है। शीश की सुन्दर चन्द्रिका चमक रही है। अलकावली में जहाँ तहाँ कुसुम गूँथकर सुन्दर वेणी सुसज्जित की गई है। स्वर्ण-मुकुट का प्रकाश निराला सौन्दर्य विकीर्ण कर रहा है। मुकुट में शोभित मोतियों की लड़ की बलिहारी है। श्री राधा के युगल कर्ण कर्णफूल से छविमान हैं। नासिका में नथ एवं बेसर की शोभा अवर्णनीय है। लाड़िली

की मदभरी प्यारी आँखों की चितवनि अति ही भोली भाली है। किशोरी के युग करों के कंकण, चूड़ियों एवं अँगूठियों की दमक अनुपम है। अर्थात् प्रत्येक आभूषण की छवि अनूठी है। श्री राधा के दिव्य गौर वपु पर नीलाम्बर शोभायमान है। उभरे हुए वक्ष पर कंचुकी धारण किये हैं। हृदय पर मोतियों के हार हिल रहे हैं। कटि पर स्वर्णिम किंकिणी की मनोहारिणी ध्वनि हो रही है। चरणों में पायल की रुनझुन बड़ी ही भली प्रतीत होती है। चरणों की उँगलियों में बिछुवों की अद्भुत शोभा है। मिहावर की लालिमा तो अनोखी ही है। प्यारी राधा की मदमाती मन्द गति को निरख कर राजहंस लज्जित हो जाते हैं। श्यामसुन्दर तो इस मधुर गति के आनन्द को न सह सकने के कारण मूर्च्छित ही हो जाते हैं। श्री कृष्ण की प्राणवल्लभा श्री राधा के प्रत्येक रोम से ब्रजरस टपकता रहता है, जिसे ब्रजगोपियों के समूह निरन्तर पान करते रहते हैं। राधा की जिस रूप माधुरी पर स्वयं श्री राधा ही बलिहार जाती हैं– उस शोभा का वर्णन भला अन्य कौन कर सकता है?

८१

नथवारी पर वारी, वारी वारी वारी।
बहुरंगी मनि गन दुति वारी,
कनक मुंकुट छवि प्यारी, वारी वारी वारी।
कारी घुँघुरारी अनियारी,

वेणी सुमन सँवारी, वारी वारी वारी।
शीशफूल सोहत सिर प्यारी,
लर मुक्तन छवि न्यारी, वारी वारी वारी।
सुघर चंद्रिका छवि अति प्यारी,
सिर सेंदुर सुकुमारी, वारी वारी वारी।
नासा नथ बेसर छवि न्यारी,
कर्णफूल श्रुति प्यारी, वारी वारी वारी।
दृग चितवनि मुख मुसुकनि प्यारी,
लखि लखि पिय बलिहारी, वारी वारी वारी।
कर करपत्र चुरी छवि न्यारी,
करतल मेहँदी प्यारी, वारी वारी वारी।
दोउ कर मणि कंकण दुति प्यारी,
मुँदरिन दुति छवि न्यारी, वारी वारी वारी।
मणिन मोतियन लर गर प्यारी,
उर कंचुकि छवि न्यारी, वारी वारी वारी।
रतन खचित किंकिनि धुनि प्यारी,
नील वसन छवि न्यारी, वारी वारी वारी।
युगल चरण पायल झनकारी,
बिछुवनि छवि अति न्यारी, वारी वारी वारी।
रोम रोम रस टपकत प्यारी,
पिय सखि सँग बनवारी, वारी वारी वारी।
अस 'कृपालु' प्यारी छवि प्यारी,
प्यारिहुँ वारी वारी, वारी वारी वारी॥

भावार्थ— नासिका में सुन्दर नथ धारण करने वाली

राधा की प्यारी छवि पर मैं बलिहार जाता हूँ। स्वर्णिम मुकुट में जड़ी हुई असंख्य रंगों वाली मणियों की द्युति की छवि अवर्णनीय है। काले रंग की घुँघराली केश-राशि की वेणी को पुष्पों से सुसज्जित किया गया है। प्यारी राधा के सिर पर शीशफूल नामक आभूषण शोभा प्राप्त कर रहा है, उसमें गुँथी हुई मोतियों की लड़ की छटा भी न्यारी ही है। सिर पर चन्द्रिका अनोखी शोभा से युक्त है। सिर के मध्य भाग में सिंदूर से माँग भरी गई है, नासिका में नथ एवं बेसर यथास्थान सुशोभित हैं। युगल कर्ण कर्णफूलों से शोभायमान हैं। नेत्रों की चितवनि एवं मुख की मंद मुस्कान को निहारकर प्रियतम बलिहार जाते हैं। युग करों करपत्र नामक आभूषण एवं चूड़ियाँ सुसज्जित हैं। करतल मेहँदी की अरुणिमा से युक्त हैं। दोनों हाथों में मणियों से जड़े हुए कंकण दमक रहे हैं। उँगलियों में अँगूठियाँ जगमगा रही हैं। प्यारी राधा के कण्ठ में मणि एवं मुक्ता के हार हिल रहे हैं। वक्ष पर कंचुकी धारण किये हैं। श्री राधा का सूक्ष्म कटि-प्रदेश रत्नों से जटित किंकिणी से झंकृत हो रहा है। गोरे अंग पर नील वर्ण का परिधान है। युगल-चरणों में पायल की अद्भुत झनकार है। उँगलियों के बिछुवों की शोभा का वर्णन कौन कर सकता है। प्यारी राधा के रोम रोम से रस की वर्षा होती रहती है। उस रस का पान श्यामसुन्दर सखियों सहित करते हैं। **'कृपालु'** कहते हैं- प्यारी राधा की ऐसी प्यारी छवि पर स्वयं राधा भी बलिहार जाती हैं।

८२

वारी बनवारी लखि प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
ऐसी मेरी प्यारी प्यारी,
श्री वृषभानुदुलारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
जो मदनहुँ मोहे बनवारी,
सोउ लखि कह बलिहारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
जाकी नेकु झलक पर वारी,
उमा रमा सी नारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
सोउ लखि गौर वरनि सुकुमारी,
नहिं अघात बनवारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
जेहि हरि हित कैलाशबिहारी,
बनि गये ब्रज ब्रजनारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
सोउ खोजत वन वन बनवारी,
कहि हा प्यारी प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
सनक आदि लखि जेहि बनवारी,
सनक समाधि बिसारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
सोउ लखि भानुदुलारी प्यारी,
सुधि गोलोक बिसारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
हौं वारी 'कृपालु' लखि प्यारी,
पुनि पियहूँ पर वारी, प्यारी प्यारी प्यारी॥

भावार्थ— मेरी श्रीराधा की प्यारी छवि देखकर बनवारी श्री कृष्ण स्वयं को निछावर कर देते हैं। ऐसी श्री वृषभानु

नन्दिनी मेरी स्वामिनी हैं। कामदेव को मोहित करने वाले स्वमन मोहन कृष्ण भी जिसे देखकर "बलिहार बलिहार" कह मुग्ध हो जाते हैं। जिसकी अतुलनीय रूपराशि की किंचित् झलक पर पार्वती और लक्ष्मी जैसी दिव्य रूपवती निज सौन्दर्य-सर्वस्व को वारती हैं, वे ही अनुपम रूपवान श्री कृष्ण श्री राधा के दिव्य गौर वर्ण को निरन्तर देखते रहने पर भी कभी स्वयं को तृप्त नहीं मानते। जिन श्री कृष्ण के दर्शन की लालसा से कैलाशवासी भोलेनाथ ब्रज में जाकर गोपी बने, वे ही परब्रह्म स्वरूप सच्चिदानन्दमय श्री कृष्ण ब्रज के वनों में हा प्राणाधिक प्रिय राधे! कहकर उन्हें ढूँढते रहते हैं। सनक आदि ब्रह्मर्षि गण जिनके दर्शन प्राप्त कर समाधि का त्याग कर देते हैं, वे ही श्री कृष्ण वृषभानुनंदिनी का दर्शन प्राप्त कर तद्जनित आनन्द में मग्न होकर अपने दिव्य गोलोकधाम का विस्मरण कर देते हैं। '**कृपालु**' कहते हैं- ऐसी श्री राधा की प्यारी छवि पर मैं स्वयं को निछावर करता हूँ। पुनः श्री राधा पर स्वयं को अर्पण करने वाले उनके प्राण प्रियतम पर भी बलिहार जाता हूँ।

८३

अपनी ओर लखु राधे, राधे मेरी राधे।
बिनु कारण करुणा कर राधे,
अस कह रसिकन राधे, राधे मेरी राधे।
याते किन्तु परन्तु न राधे,

अब लगाउ कछु राधे, राधे मेरी राधे।
हौं तो सदा सदा ते राधे,
अहौं विमुख तव राधे, राधे मेरी राधे।
याते तव माया ने राधे,
हर्यो ज्ञान मम राधे, राधे मेरी राधे।
याते भयो सक्त जग राधे,
भूल्यो निज सुधि राधे, राधे मेरी राधे।
पुनि पुनि लख चौरासी राधे,
योनि भ्रम्यो नित राधे, राधे मेरी राधे।
माया ते तो हारे राधे,
विधि हरि हर हूँ राधे, राधे मेरी राधे।
तुम ही मम जानत हौं राधे,
मानत नहिं मन राधे, राधे मेरी राधे।
आपुन दोष दुरावत राधे,
दोष देत तोहिं राधे, राधे मेरी राधे।
तू साकार कृपा है राधे,
करहु कृपा अब राधे, राधे मेरी राधे।
पतित 'कृपालु' पतित ते राधे,
पतित पावनी राधे, राधे मेरी राधे॥

भावार्थ— भक्त कहता है–श्री राधे अपने स्वभाव और सहज गुणों की तरफ ही देखकर मेरी भी बिगड़ी बना दो। तुम्हारे रसिक भक्त कहते हैं कि तुम बिना कारण के कृपा करती हो; अत: अब मेरी बार कृपा करने में किंतु परन्तु न

लगाओ। मैं स्वीकार करता हूँ कि अनादि काल से मैं तुम्हारे प्रतिकूल ही आचरण करता रहा। तुमसे विमुख होने के कारण माया ने मेरे स्वरूप का ज्ञान भुला दिया। इसी कारण जगत् में आसक्त हो जाने के कारण मैं तुम्हारे दासत्व और निज आत्मस्वरूप को भूल गया। इसी कारण से मुझे सदा चौरासी लाख योनियों मे भटकना पड़ा। हे राधे! तुम्हारी माया से तो ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव भी पराजित हो चुके हैं। मैं जानता तो हूँ कि केवल तुम ही मेरी हो परन्तु इस सत्य को हृदय से स्वीकार नहीं करता। मैं अपने दोष को छिपाकर तुमको ही दोष देता हूँ। हे माँ राधे! तुम कृपा की साक्षात् मूर्ति हो; अतः अब मुझ पर शीघ्र कृपा करो। हे पतितपावनी! मैं समस्त पतितों से अधिक पतित हूँ।

८४

आ माँ निज शिशु ढिग श्यामा, श्यामा मेरी श्यामा।
तू तो पुत्र वत्सला श्यामा,
हौं कुपूत तव श्यामा, श्यामा मेरी श्यामा।
ज्यों जग महँ कोऊ शिशु श्यामा,
जान न निज माँ श्यामा, श्यामा मेरी श्यामा।
त्यों हौं हूँ तव महिमा श्यामा,
जानि सक्यों नहिं श्यामा, श्यामा मेरी श्यामा।
तनु की माँ माना माँ श्यामा,
तव मायावश श्यामा, श्यामा मेरी श्यामा।

कह श्रुति अरु तव जन माँ श्यामा,
मन बुधि पर तू श्यामा, श्यामा मेरी श्यामा।
बिनु तव अनुकंपा माँ श्यामा,
नहिं जान्यो कोउ श्यामा, श्यामा मेरी श्यामा।
'यमेवैषवृणुते,' श्रुति श्यामा,
भाव इहै कह श्यामा, श्यामा मेरी श्यामा।
द्वार लक्ष चौरासी श्यामा,
घूम्यो पुनि पुनि श्यामा, श्यामा मेरी श्यामा।
अब लौं मोह निशा में श्यामा,
सोया था मैं श्यामा, श्यामा मेरी श्यामा।
गुरु ने मोहिं जगाया श्यामा,
अब नहिं सोऊँ श्यामा, श्यामा मेरी श्यामा।
मैं हूँ अंश तिहारो श्यामा,
तू मम स्वामिनि श्यामा, श्यामा मेरी श्यामा।
न्याय 'कृपालु' चहत नहिं श्यामा,
कृपा चहत तव श्यामा, श्यामा मेरी श्यामा॥

भावार्थ— भक्त श्री राधा के प्रति कहता है- हे श्यामा माँ! अपने पुत्र के निकट आओ। तुम तो पुत्र के प्रति वात्सल्य रखने वाली हो किंतु मैं तो कुपुत्र हूँ। जिस प्रकार संसार में नवजात शिशु अपनी माँ को नहीं जानता, उसी प्रकार से मैं भी तुम्हारी महिमा को नहीं जान सका। तुम्हारी माया से भ्रमित होकर मैंने शरीर की माँ को ही अपनी माँ समझा। वेद एवं संत ऐसा कहते हैं कि तुम मन एवं बुद्धि से परे हो। तुम्हारी कृपा के

बिना तुम्हें कोई भी जान नहीं सका है, वेद के "यमेवैष वृणुते" मंत्र का यही भाव है। अब तक मैं बार बार चौरासी लाख योनियों में भटकता रहा। अज्ञान की अंधकारमयी रात्रि में मैं सोया रहा। गुरु द्वारा जगाये जाने पर अब मैं नहीं चाहता कि पुनः मुझ पर अज्ञान हावी हो। मैं तुम्हारा अंश हूँ, तुम मेरी स्वामिनी हो। मैं तुमसे न्याय की याचना नहीं करता, मैं तो तुम्हारी कृपा चाहता हूँ।

८५

चह बस ब्रजरस राधे, राधे मेरी राधे।
नहिं चह भव वैभव रस राधे,
सोउ विष मिश्रित राधे, राधे मेरी राधे।
नहिं चह सात स्वर्ग रस राधे,
सोउ दुख मिश्रित राधे, राधे मेरी राधे।
नहिं चह ब्रह्मलोक रस राधे,
सोउ मायिक रस राधे, राधे मेरी राधे।
अपवर्गहुँ रस नहिं चह राधे,
तुम न मिलहु तहँ राधे, राधे मेरी राधे।
नहिं चह वैकुण्ठहुँ रस राधे,
अति वैभवयुत राधे, राधे मेरी राधे।
नहिं चह द्वारवतिहुँ रस राधे,
सोउ वैभवयुत राधे, राधे मेरी राधे।

नहिं चह मथुराहूँ रस राधे,
तहहुँ न ब्रजरस राधे, राधे मेरी राधे।
हौं चह वृन्दावन रस राधे,
मधुर मधुरतम राधे, राधे मेरी राधे।
वारौं कोटि ब्रह्मसुख राधे,
ब्रजरस बिंदुहिं राधे, राधे मेरी राधे।
आयो पूर्णब्रह्म हरि राधे,
ब्रजरस हित ब्रज राधे, राधे मेरी राधे।
आनँदकंद नंदसुत राधे,
रोवत कहि हा राधे, राधे मेरी राधे।
टुक 'कृपालु' दे ब्रजरस राधे,
जो दिय रसिकन राधे, राधे मेरी राधे॥

भावार्थ— हे राधे! मैं तो केवल ब्रजरस की ही लालसा रखता हूँ । मुझे संसार का वैभव नहीं चाहिये। उसमें तो विष मिला हुआ है। सातों स्वर्गों का सुख भी मैं नहीं चाहता, उसमें भी दुःख मिला हुआ है। ब्रह्मलोक की प्रतिष्ठा भी मैं नहीं चाहता क्योंकि वहाँ भी माया का आधिपत्य है। मुक्ति का सुख भी मुझे नहीं चाहिये; क्योंकि एकत्व हो जाने पर तुम्हारे दर्शन आदि का सुख कैसे प्राप्त हो सकेगा। वैकुण्ठ के ऐश्वर्य में भी मुझे रस की अनुभूति नहीं हो सकेगी। मथुरावासी जिस रस का अनुभव करते हैं- ब्रजरस से रहित होने के कारण मुझे वह भी प्रिय नहीं प्रतीत होता। मुझे तो सर्वाधिक मधुरतम वृन्दावन रस

ही प्रदान करो। ब्रजरस के बिंदु मात्र पर करोड़ों ब्रह्मसुख निछावर किये जा सकते हैं। ब्रजरस की प्राप्ति के हेतु तो पूर्णतम पुरुषोत्तम श्री कृष्ण भी ब्रजमंडल में पधारे। आनन्दमय नंदनंदन ब्रजरस की प्राप्ति के हेतु "हा राधे" कहकर रो पड़ते हैं। **'कृपालु'** कहते हैं- हे राधे! तुमने अपने रसिक भक्तों को जो ब्रजरस प्रदान किया है, वह मुझे भी देने की कृपा करें।

८६

तू ही इक दाता राधे, राधे राधे राधे।
रचे विधाता सब जग राधे,
सोउ भिक्षुक तव राधे, राधे राधे राधे।
पाले विश्व सकल हरि राधे,
सोउ भिक्षुक तव राधे, राधे राधे राधे।
कर संहार जगत हर राधे,
सोउ भिक्षुक तव राधे, राधे राधे राधे।
परमहंस सनकादिक राधे,
सोउ भिक्षुक तव राधे, राधे राधे राधे।
कर्मी योगी ज्ञानी राधे,
सब भिक्षुक तव राधे, राधे राधे राधे।
यदपि और इक दाता राधे,
नँदनंदन हैं राधे, राधे राधे राधे।
तुमसोंइ पाय प्रेमरस राधे,
सोउ बन दाता राधे, राधे राधे राधे।

दिव्य प्रेमरस मादन राधे,
नहिं पायो हरि राधे, राधे राधे राधे।
याते पूर्णब्रह्म हरि राधे,
याचत रस तोहिं राधे, राधे राधे राधे।
हौं 'कृपालु' हौं भिक्षुक राधे,
देहु प्रेम रस राधे, राधे राधे राधे।

भावार्थ— हे राधे! सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों को दान देकर तृप्त करने वाली एकमात्र तुम ही दानी शिरोमणि हो। जो ब्रह्मा सम्पूर्ण विश्व की सृष्टि करने की सामर्थ्य रखते हैं, वे भी तुम्हारे द्वार के भिक्षुक हैं। श्री हरि जो अनन्त कोटि ब्रह्माण्डों का पालन करते हैं, वे भी तुम्हारे द्वार पर तुम्हारी कृपा की याचना करते हैं। शिव, जो जग का संहार करते हैं, वे भी तुम्हारे कृपा-कटाक्ष की प्रतीक्षा करते रहते हैं। सनक आदि परमहंस भी तुम्हारे प्रेम के भिखारी हैं। कर्मकांडी, योगी एवं ज्ञानी भी तुम्हारी कृपा के बिना अपने लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर सकते। यद्यपि नंदनंदन श्री कृष्ण भी दानी हैं। किंतु वे तो तुमसे ही प्रेम प्राप्त कर जीवों को प्रेम प्रदान करते हैं। श्री कृष्ण प्रेम के मादन रस को प्राप्त नहीं कर सके; अतः वे पूर्णब्रह्म स्वरूप होकर भी तुम्हारे द्वार पर रस की याचना करते हैं। '**कृपालु**' कहते हैं- हे राधे! मैं भी तुम्हारे द्वार का भिक्षुक हूँ, मुझे भी प्रेमरस प्रदान करो।

८७

तू ही मेरी तू ही मेरी राधे, राधे राधे राधे।
तू भी मेरी तू भी मेरी तू भी मेरी राधे,
माना नित मैंने राधे, राधे राधे राधे।
गुरु ने कहा हटा दे इस 'भी' को राधे,
'ही' को लगा दे बस राधे, राधे राधे राधे।
बार बार समुझायेहु राधे,
भी न तजत मन राधे, राधे राधे राधे।
जूते लात खात जग राधे,
तदपि जात तित राधे, राधे राधे राधे।
बड़े-बड़े योगी भी राधे,
हारे मन ते राधे, राधे राधे राधे।
कितनोइ बिसरावत जग राधे,
बिसरत नहिं जग राधे, राधे राधे राधे।
हौं अब सब विधि हार्‌यो राधे,
चंचल मन ते राधे, राधे राधे राधे।
जो दे दो टुक ब्रज रस राधे,
करुणाकारिणि राधे, राधे राधे राधे।
लगि जाय रस का चसका राधे,
जग न जाय मन राधे, राधे राधे राधे।
सुनहु विनय मम तुम्हरो राधे,
घटि न जाय कछु राधे, राधे राधे राधे।
तुम बिनु हेतु सनेहिनि राधे,

सबै रसिक कह राधे, राधे राधे राधे।
याते अब 'कृपालु' पर राधे,
कृपा कोर करु राधे, राधे राधे राधे॥

भावार्थ— भक्त अपनी इष्ट देवी श्री राधा को सम्बोधित करते हुए कह रहा है- हे श्री राधे! मेरी तो एकमात्र तुम ही हो। मैंने अपने अज्ञान के कारण अभी तक यह माना कि जगत् मेरा है और तुम भी मेरी हो। गुरु ने समझाया कि 'भी' को हटाकर 'ही' लगा दे। मैंने अनेक प्रयास किये किंतु मेरा हठी मन 'भी' को नहीं छोड़ता। संसारियों के जूते लात खाते हुए भी मन सदा उन्हीं में लगा रहता है। हे श्री राधे! मेरी क्या बिसात है? बड़े-बड़े योगी भी मन से पराजित हो गये। संसार को भुलाने की चेष्टा करने पर और अधिक स्मृति होती है। मैं अपने चंचल मन से हार चुका हूँ। हे करुणाकारिणि! यदि एक बार किंचित् ब्रजरस मुझे भी प्रदान कर दो तो फिर इस दुष्ट मन को रस का चसका लग जायगा फिर यह जगत् में नहीं जायगा। हे भोली भाली राधे! मेरी भी प्रार्थना स्वीकार कर लो। भला तुम्हारे कृपा के भंडार में क्या अभाव हो जायगा? सभी रसिकजन तुम्हें बिना हेतु ही प्रेम वितरण करने वाली समझते हैं अतः मुझ पर भी अपनी कृपा दृष्टि डाल दो।

८८

तू ही तो है मेरी गति राधे, राधे राधे राधे।
पतित पावनी तू इक राधे,
और न कहुँ कोउ राधे, राधे राधे राधे।
बने बने के साथी राधे,
सुर नर मुनि सब राधे, राधे राधे राधे।
दीन हीन की तू ही राधे,
अस कह रसिकन राधे, राधे राधे राधे।
तेरो ही बल है बल राधे,
निबल और बल राधे, राधे राधे राधे।
तू तो रह सब उर पुर राधे,
माने कोउ कोउ राधे, राधे राधे राधे।
तू तो बिनु कारण ही राधे,
कृपा करति नित राधे, राधे राधे राधे।
जेहि उर अस प्रतीति हो राधे,
कृपा पाव सोइ राधे, राधे राधे राधे।
अस करु कृपा किशोरी राधे,
हो प्रतीति मोहिं राधे, राधे राधे राधे।
यदपि 'कृपालु' जान सब राधे,
मान तदपि नहिं राधे, राधे राधे राधे।

भावार्थ— भक्त श्री राधा के प्रति कहता है- हे राधे! मेरी तो एकमात्र गति तुम ही हो। पतितों को पावन बनाने वाली

केवल तुम ही हो। कहीं भी कोई दूसरा दिखाई नहीं देता। "सुर नर मुनि सबकी यह रीती। स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती।" बने बने के तो सभी साथी बन जाते हैं। संत कहते हैं- दीन-हीन की आश्रय एकमात्र तुम ही हो। सत्य तो यह है कि तुम्हें छोड़कर सभी बलवान बल रहित हैं। सच्चा बल तो एकमात्र तुम्हारा ही बल है। तुम्हारा निवास सभी के हृदय में है, परन्तु इस सत्य को सभी स्वीकार नहीं करते। हे कृपामयी! तुम तो सभी पर अकारण कृपा सदा करती हो, परन्तु जिसके हृदय में यह विश्वास है, वही वास्तव में तुम्हारी कृपा प्राप्त करने का अधिकारी है। हे किशोरी राधे! मुझ पर ऐसी कृपा करो जिससे कि मैं तुम्हारी अकारण करुणा पर विश्वास कर सकूँ। **'कृपालु'** कहते हैं-राधे! तुम्हारे गुण आदि को जानते तो सभी हैं परन्तु मानने वाला तो बिरला ही है।

८९

तू ही दाता राधे, राधे राधे राधे।
सब हैं लेने वाले राधे,
देने वाली राधे, राधे राधे राधे।
तू ही इक बिनु कारण राधे,
करुणाकारिणि राधे, राधे राधे राधे।
तेरे द्वार जाँय सब राधे,
बने भिखारी राधे, राधे राधे राधे।

विधि हरि हर सुर तेरी राधे,
कृपा माँग नित राधे, राधे राधे राधे।
उमा रमा ब्रह्माणी राधे,
बनीं भिखारिनि राधे, राधे राधे राधे।
औरन की का कहिये राधे,
बुरो न मानिय राधे, राधे राधे राधे।
माँग प्रेम बनि भिक्षुक राधे,
ब्रह्म श्यामहूँ राधे, राधे राधे राधे।
तेरे जन के पाछे राधे,
चलत श्याम नित राधे, राधे राधे राधे।
बिमल चित्त हो अथवा राधे,
समल चित्त हो राधे, राधे राधे राधे।
सबहीं कहँ अपनावति राधे,
शरण गये तुम राधे, राधे राधे राधे।
तोसों नहिं 'कृपालु' कोउ राधे,
है 'कृपालु' कहुँ राधे, राधे राधे राधे॥

भावार्थ— हे श्री राधे! त्रिभुवन में एकमात्र तुम ही दानियों में शिरोमणि हो। सभी लेने वाले हैं। देने वाली तो एकमात्र तुम ही हो। बिना कारण करुणा करने वाली भी एकमात्र तुम ही हो। सभी तुम्हारे द्वार के भिक्षुक हैं। ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव भी निरन्तर तुम्हारी कृपा की याचना करते हैं। शिव की शक्ति पार्वती, विष्णु की अर्धांगिनी लक्ष्मी एवं ब्रह्माणी सावित्री भी तुम्हारे द्वार की भिखारिणी हैं। हे राधे! बुरा न मानना और

की चर्चा क्या करूँ, ब्रह्म श्री कृष्ण भी भिक्षुक बनकर तुमसे प्रेम की याचना करते हैं। तुम्हारे भक्तों के पीछे पीछे श्यामसुन्दर चलते हैं। जो तुम्हारे शरणागत हो गया वह विमल हो अथवा समल तुम समान रूप से सभी को अपना स्वीकार कर लेती हो। श्री राधे! तुम्हारे समान कृपालु तो कहीं भी कोई नहीं है।

१०

तेरी ही तो हूँ मैं राधे, राधे राधे राधे।
तेरी ही थी आगे भी रहूँगी तेरी राधे,
यह प्रतीति उर राधे, राधे राधे राधे।
तू ही मेरी गति तू ही मेरी मति राधे,
तू ही मेरी रति है राधे, राधे राधे राधे।
पतितन हित नहिं कहुँ कोउ राधे,
पतितपावनी राधे, राधे राधे राधे।
हौं हौं एक अकिञ्चन राधे,
चरण शरण दे राधे, राधे राधे राधे।
मम रसना तो माने राधे,
लेय नाम तव राधे, राधे राधे राधे।
पै यह मन नहिं माने राधे,
कर मनमाना राधे, राधे राधे राधे।
बहु विधि येहि समुझायेउँ राधे,
हार्‌यो सब विधि राधे, राधे राधे राधे।

तव माया मोह्यो मन राधे,
बरजु याय तू राधे, राधे राधे राधे।
है 'कृपालु' मन ही तो राधे,
कर्ता धर्ता राधे, राधे राधे राधे।

भावार्थ— भक्त कहता है- हे श्री राधे! मैं एकमात्र तुम्हारी ही हूँ, तुम्हारी ही थी तथा सदा तुम्हारी ही रहूँगी। मेरे हृदय में यह विश्वास है कि एकमात्र तुम ही मेरी आश्रय स्वरूपा हो। तुम ही मुझे शुद्ध बुद्धि प्रदान करने वाली हो तथा तुम ही अमूल्य श्री कृष्ण-प्रेम का वितरण करने वाली हो। हे पतितों को पवित्र करने वाली राधे! पतितजनों के लिये तो कहीं भी कोई आश्रय दाता नहीं है। राधे! मैं सर्वथा अकिंचन हूँ; अत: अपने चरणों की शरण प्रदान करो। मैं जिह्वा से तो तुम्हारा नाम लेता हूँ परन्तु मन से मनमानी ही करता हूँ। मैं तो अनेक प्रकार से इस मन को समझाकर थक गया। तुम्हारी माया से मुग्ध हुए इस मन को मैं नहीं जीत सका। तुम ही इसे भय दिखाकर अपने आधीन कर लो। मन ही कर्ता, भोक्ता है। जब मन तुम्हारा बन जायेगा तो फिर मैं सदा के लिये कर्मबंधन से मुक्त होकर तुम्हारा ही बन जाऊँगा।

११

दोष सबै मम श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
तुम तो सदा सदा ते श्यामा,

रहीं वत्सला श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
रहीं सर्वव्यापक पुनि श्यामा,
सकल जगत महँ श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
पुनि बैठीं सब उर पुर श्यामा,
अंतर्यामिनि श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
यह सब जानत यद्यपि श्यामा,
तदपि न मानत श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
प्रणत पतित हित तुम नित श्यामा,
बनतिं कल्पतरु श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
क्रंदन करुण सुनत ही श्यामा,
भाजतिं पिय तजि श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
तुम मूरति करुणा की श्यामा,
अस कह रसिकन श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
तुम ही एक जगत महँ श्यामा,
अधम उधारिनि श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
द्रवहु सदा बिनु सेवा श्यामा,
एकमात्र तुम श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
काहुहिं बल है काहुहिं श्यामा,
मोरे बल तुम श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
कृपा अकारण कर जो श्यामा,
तुम बिनु को अस श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
नाम 'कृपालु' मृषा मम श्यामा,
तुम कृपालु हो श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा॥

भावार्थ— भक्त जगज्जननी श्री राधा के प्रति अपने हृदय के भाव प्रकट करते हुए कह रहा है- हे दीनवत्सला

राधे! सारा दोष मेरा ही है तुम समस्त जगत् में व्यापक होने के साथ ही सबके हृदय में वास करने से अन्तर्यामिनी भी हो। मैं जानता हूँ, किंतु मानता नहीं। जो पतितजन तुम्हारे प्रति शरणापन्न हो जाते हैं, उनके लिये तुम निरन्तर कल्पतरु के समान उनके मनोवांछित पदार्थ (भुक्ति, मुक्ति एवं श्री कृष्ण-प्रीति) प्रदान करने में सक्षम हो। अधम प्राणियों का करुण- क्रन्दन सुनते ही तत्क्षण गोलोक से अपने प्राण प्रियतम का भी परित्याग कर उनके निकट दौड़ी चली आती हो। रसिक जन तुम्हें करुणा की मूर्ति ही बताते हैं। अधमों का उद्धार तुम्हारे अतिरिक्त और कौन करने में समर्थ है? एकमात्र तुम ही ऐसी कोमल-हृदया हो जो बिना सेवा के ही दीनों पर द्रवीभूत हो जाती हो। हे किशोरी! किसी को किसी अन्य शक्ति का भरोसा होगा, मेरे लिये तो तीनों लोकों में एकमात्र तुम्हारा ही बल है। तुम्हारे अतिरिक्त और कोई ऐसी भगवदीय शक्ति नहीं जो बिना कारण के कृपा कर सके। '**कृपालु**' कहते हैं- मेरा नाम कृपालु तो झूठा है, वस्तुतः कृपालु तो एकमात्र तुम ही हो।

१२

महल टहल दे राधे, राधे राधे राधे।
हौं नहिं चहत कर्मफल राधे,
सप्त स्वर्ग सुख राधे, राधे राधे राधे।
हौं नहिं चहत योगफल राधे,

अष्ट सिद्धि निधि राधे, राधे राधे राधे।
हौं नहिं चहत ज्ञान फल राधे,
मुक्ति आदि सुख राधे, राधे राधे राधे।
हौं नहिं चह बैकुण्ठहुँ राधे,
सुख अनंत जहँ, राधे, राधे राधे राधे।
नहिं चह द्वारवतिहुँ रस राधे,
जहँ वैभव सुख राधे, राधे राधे राधे।
नहिं चह मथुराहूँ रस राधे,
नहिं ब्रजरस तहँ राधे, राधे राधे राधे।
हौं तो चह नित ब्रजरस राधे,
जेहि सम रस नहिं राधे, राधे राधे राधे।
मोहिं 'कृपालु' बनवा दे राधे,
महल टहलिनी राधे, राधे राधे राधे॥

भावार्थ— भक्त अपनी स्वामिनी श्रीराधा से प्रार्थना करता है- हे श्री राधे! मुझे अपने महल की निजी सेवा प्रदान करो। अपने शुभ कर्मों के फल-स्वरूप सात स्वर्गों का सुख मुझे नहीं चाहिये। योगी-जन योग की सिद्धि, स्वरूपा आठ प्रकार की सिद्धियाँ एवं नौ निधियाँ जो प्राप्त करते हैं, उनमें भी मेरी रुचि नहीं है। ज्ञान के फलस्वरूप जो मुक्ति का सुख ज्ञानियों को प्राप्त होता है, वह भी मैं नहीं चाहता। यहाँ तक कि माया से परे वैकुण्ठ धाम का अनन्त सुख भी मैं नहीं चाहता। द्वारिका का ऐश्वर्य-युक्त सुख भी मुझे नहीं भाता। जिस मथुरा के वैभव में ब्रजरस का माधुर्य नहीं है, उसकी वांछा भी मैं नहीं

करता। जिस ब्रजरस के समान अन्य कोई रस नहीं है उसी ब्रजरस की वासना निरन्तर मेरे मन में रहती है। '**कृपालु**' के शब्दों में हे राधे! तुम्हारे विलास भवन की एक क्षुद्र सेविका बनूँ, ऐसी मेरी कामना है। मेरी इस कामना की पूर्ति तुम्हारे द्वारा ही होगी।

१३

मेरी ठकुरानी रानी राधे, राधे राधे राधे।
जेहि डर डरे डर सोइ हरि राधे,
डरे डर मानिनि राधे, राधे राधे राधे।
जेहि भज ब्रह्मादिक सोइ राधे,
हरि भज निशि दिन राधे, राधे राधे राधे।
जेहि गुन गावति नित श्रुति राधे,
सोइ गावत गुन राधे, राधे राधे राधे।
जेहि ध्यावत सनकादिक राधे,
सोइ ध्यावत छवि राधे, राधे राधे राधे।
जेहि पद रज चह शिव शुक राधे,
सोइ चह पद रज राधे, राधे राधे राधे।
जेहि लखि मोहे मदनहुँ राधे,
सोइ मोहे लखि राधे, राधे राधे राधे।
जेहि पग चापत कमला राधे,
सोइ चापत पग राधे, राधे राधे राधे।
जेहि जय बोलत सब जग राधे,

सोइ जय बोलत राधे, राधे राधे राधे।
जेहि कृपालु कह हरि हर राधे,
सोइ 'कृपालु' कह राधे, राधे राधे राधे॥

भावार्थ— मेरी स्वामिनी तो राधा रानी हैं। जिन श्री हरि के भय से भय भी भयभीत होता है, वे ही मानिनी राधा के भय से भयभीत हो जाते हैं। जिन हरि की सेवा ब्रह्मा आदि श्रेष्ठ देवगण करते हैं, वे ही सर्वसेव्य श्री हरि रात-दिन अपनी आराध्या राधा का सेवन करते हैं एवं सतत् राधा-गुण-गान करते रहते हैं। जिन श्री कृष्ण का ध्यान सनक आदि परमहंस गण करते हैं, वे ही श्री कृष्ण श्री राधा की दिव्य रूप-माधुरी का ध्यान करते हैं। शिव एवं शुकदेव जैसे ज्ञानी जिनकी चरण-रज की कामना करते रहते हैं, वे सर्वेश्वर कृष्ण सदैव राधा चरण-रज के लिये लालायित रहते हैं। जिसे देखकर सौन्दर्याभिमानी कामदेव भी मोहित हो गया, वही पुरुषोत्तम राधा की अप्राकृत शोभा को देखकर मुग्ध हो गया। महालक्ष्मी अपने अत्यन्त सुकुमार करों से जिनके कोमल चरणों का संवाहन करने में संकुचित होती हैं, वे ही परम प्रेमी प्रभु अपने कमल-कोमल करों से सुकुमारी राधा के चरणों का संवाहन करने में अपने सौभाग्य की सराहना करते हैं। सारा विश्व जिनकी जय जयकार करता है वे श्री राधा का स्वागत सम्मान प्रदर्शित करते हुए उनकी जय जयकार करते हैं। विष्णु एवं शिव जिसकी कृपा का ओर छोर नहीं प्राप्त कर पाते वे **'कृपालु'** हरि श्री राधा की कृपा का बखान करते रहते हैं।

९४

मो सम पतित न राधे, राधे राधे राधे।
पतितपावनी भी तो राधे,
तुम सम नहिं कोउ राधे, राधे राधे राधे।
सुर नर मुनि सबही हैं राधे,
स्वारथरत नित राधे, राधे राधे राधे।
पुनि वे भी मायावश राधे,
बने पतित नित राधे, राधे राधे राधे।
श्यामहुँ समदर्शी हैं राधे,
न्याय करत नित राधे, राधे राधे राधे।
तुम बिनु हेतु सनेहिनि राधे,
कहत रसिकजन राधे, राधे राधे राधे।
आयो द्वार तिहारे राधे,
इहै आस लै राधे, राधे राधे राधे।
हमरी सिगरी बिगरी राधे,
बनि जैहैं अब राधे, राधे राधे राधे।
परम विचित्र पतित हौं राधे,
पतित न मानत राधे, राधे राधे राधे।
दैन्य भाव नेकहुँ नहिं राधे,
अति अभिमानी राधे, राधे राधे राधे।
लो अपनाय कृपालुहिं राधे
अति 'कृपालु' तुम राधे, राधे राधे राधे॥

भावार्थ— भक्त ठकुरानी राधा से कहता है- हे राधे! मेरे समान कोई पापी नहीं है, किंतु तुम्हारे समान कोई पतितपावनी भी तो नहीं है। सुर, नर, मुनि सभी स्वार्थरत हैं,

सुर नर मुनि सबकी यह रीती, स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती। मायाधीन होने के कारण ये सभी पतित ही हैं। श्यामसुन्दर समदर्शी होने के कारण न्याय कर सकते हैं किंतु तुम बिना कारण के ही प्रेमदान देती हो। ऐसा सभी रसिकजन कहते हैं। इसी आशा को लेकर तुम्हारे द्वार पर आ गया हूँ। तुम्हारी कृपा से मेरी बिगड़ी भी बन जायगी। मैं ऐसा पतित हूँ जो स्वयं को पतित नहीं मानता मैं दीनता से तो परिचित ही नहीं। अत्यन्त अभिमानी हूँ। तुम अत्यन्त कृपामयी हो, अतः '**कृपालु**' को भी अपना लो।

९५

वर दे वर दे राधे, राधे राधे राधे।
दिव्य धाम वृंदावन राधे,
जनम दिला दे राधे, राधे राधे राधे।
निज सखियन बिच मोहूँ राधे,
सखी बना दे राधे, राधे राधे राधे।
सखी बनावहु नहिं यदि राधे,
पशुहि बना दे राधे, राधे राधे राधे।
पशुहुँ बनावहु नहिं यदि राधे,
खगहि बना दे राधे, राधे राधे राधे।

खगहुँ बनावहु नहिं यदि राधे,
तरुहि बना दे राधे, राधे राधे राधे।
तरु न बना तो ब्रज की राधे,
रजहिं बना दे राधे, राधे राधे राधे।
दरस परस सेवा नित राधे,
पावूँ तेरी राधे, राधे राधे राधे।
यदि यह सब ना दे तो राधे,
प्यास बढ़ा दे राधे, राधे राधे राधे।
परम व्याकुलता हो राधे,
दरस परस हित राधे, राधे राधे राधे।
पल पल विकल रहूँ नित राधे,
तव झाँकी हित राधे, राधे राधे राधे।
कह 'कृपालु' जो चह दे राधे,
मानु आपुनी राधे, राधे राधे राधे॥

भावार्थ— भक्त श्री राधा के समक्ष दीनतापूर्ण याचना करता है- हे वरदायिनी देवी! वर देने में तुम सक्षम हो। तुम्हारा कर कमल सदैव ही वरद-मुद्रा में रहता है। मैं भी तुमसे कुछ प्रार्थना कर रहा हूँ, तुम उसे पूर्ण करो। मुझे अपने दिव्य वृन्दावन धाम में जन्म दो। हे किशोरी! अपनी नित्य सखियों के मध्य मुझे भी सखी बनाकर रख लो। हे श्यामा! यदि इतना अधिकार देने में तुम्हें संकोच प्रतीत होता है तो मैं तुम्हें विवश नहीं करता, मुझे श्री वृन्दावन धाम का पशु ही बना दो। रसखान की भी कामना -

'जो पशु हौं तो कहा बस मेरो चरौं नित नंद की धेनु मझारन'। हे रासेश्वरी राधे! यदि तुम ऐसा न करना चाहो तो मुझे अपने नित्य धाम में किसी पक्षी का ही शरीर दे दो। रसखान कहते हैं–

"जो खग हौं तो बसेरो करौं नित कालिंदी–कूल कदम्ब की डारन।"

हे सर्वसमर्था वृन्दावनेश्वरी! यदि मैं पक्षी बनने का भी अधिकारी नहीं हूँ तो अपने नित्य निकुंज में वृक्ष बनाकर ही रख लो। हे कृष्ण प्राणाधिके! यदि तुम मुझे ब्रजधाम का वृक्ष भी नहीं बनाना चाहती हो तो श्री वृन्दावन की पावन रज ही बना दो जिससे मुझे तुम्हारे कोमल चरणों का स्पर्श प्राप्त हो सके। हे मोहन मोहिनी मैं किसी भी प्रकार से तुम्हारा दर्शन, स्पर्श आदि प्राप्त कर सकूँ तथा तुम्हारी रुचि के अनुकूल कोई सेवा कर सकूँ, ऐसा मुझे बना दो। हे अकारण करुणामयी! यदि मैं सर्वथा ही अनधिकारी हूँ तो तुम अपने दर्शन, सेवा आदि को प्राप्त करने की व्याकुलता ही प्रदान कर दो। श्री राधे! तुम्हारी मनोरम रूप छटा के दर्शनार्थ व्याकुलता हो ऐसा कब होगा? मेरा क्षण क्षण उस सौभाग्य शाली अवसर की प्रतीक्षा में ही व्यतीत हो। '**कृपालु**' कहते हैं–हे कृष्णाराधिके! तुम मुझे अपनी समझकर अपनी रुचि के अनुसार जो उचित समझो प्रदान करो।

९६

श्याम पियत रस राधे, राधे राधे राधे।
सोवत जागत ध्यावत राधे,
मन भावत छवि राधे, राधे राधे राधे।
नहिं बिसरति आधे पल राधे,
रोम रोम रम राधे, राधे राधे राधे।
लखन चहत नित छविनिधि राधे,
निर्निमेष दृग राधे, राधे राधे राधे।
परस चहत नित तनु तनु राधे,
रहि न सकत बिनु राधे, राधे राधे राधे।
नासा चह सुगंध तनु राधे,
मादन रसयुत राधे, राधे राधे राधे।
रसना चह चरणामृत राधे,
सरस सुधा रस राधे, राधे राधे राधे।
सुनन चहत नित गुनगन राधे,
नहिं अघात गुन राधे, राधे राधे राधे।
यत्र तत्र सर्वत्रहिं, राधे,
व्यापक भासें राधे, राधे राधे राधे।
मुरलि 'कृपालु' गाव नित राधे,
राधे राधे राधे, राधे राधे राधे॥

भावार्थ— श्यामसुन्दर सदैव ही राधा-रस-पान करते रहते हैं। राधा की मनभावनी छवि का ही सोते जागते ध्यान

करते हैं। श्री राधा को ब्रजराज कुमार कभी आधे क्षण को भी भूल नहीं पाते। राधा तो उनके रोम-रोम में रम गई हैं। नंदनंदन के नेत्र अपलक रहकर निरन्तर ही राधा-रूप-माधुरी का दर्शन करना चाहते हैं। दिव्य शरीर से राधा के कोमल अप्राकृत शरीर का स्पर्श पाने को उत्कंठित ही बने रहते हैं। मादन भाव प्राप्त राधा के चिन्मय शरीर की मादक गंध को ग्रहण करने हेतु श्री कृष्ण की नासिका लालायित रहती है। श्री कृष्ण की भाग्यशालिनी जिह्वा श्री राधा के सरस चरणामृत के हेतु सदा अतृप्त ही बनी रहती है। प्रेमी कृष्ण के श्रवण सदा ही श्री राधा के दिव्य गुणों को सुनने के लिये अत्यन्त आतुर रहते हैं। सर्वव्यापक राधा का अनुभव उनके प्रियतम यत्र तत्र सर्वत्र ही करते हैं। '**कृपालु**' कहते हैं कि रसज्ञ श्री कृष्ण मुरली की तान छेड़कर उसमें भी राधा राधा नाम गाकर प्रफुल्लित होते हैं।

१७

सुनु सुनु सुनु माँ श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
तोसों विमुख रह्यो नित श्यामा,
तव मायावश श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
याते भूल्यो 'को मैं, श्यामा,
मान्यो जग निज श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
यह भी भूल्यो 'तुम मम श्यामा,
हौं हौं तुम्हरो श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।

तनु के संबंधिन सों श्यामा,
जोर्‌यो नातो श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
उनहिँन संबंधिन सों श्यामा,
माँग्यो सुख नित श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
सुख तो पायो लेश न श्यामा,
दुख पायो अति श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
रसिक कृपा अब जान्यों श्यामा,
जग स्वारथ रत श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
भूमा सुख की स्वामिनि श्यामा,
तुम हो, जाना श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
आयो भीख माँगने श्यामा,
द्वार तिहारे श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
भुक्ति मुक्ति वैकुण्ठहुँ श्यामा,
हौं न चहौं कछु श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
चह निष्काम प्रेम तव श्यामा,
जेहि दिय गोपिन श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
चह तेरी सेवा या श्यामा,
तव जन सेवा श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा।
चह तव सुख में ही हो श्यामा,
मम 'कृपालु' सुख श्यामा, श्यामा श्यामा श्यामा॥

भावार्थ— भक्त अपने हृदयोद्‌गार अपनी इष्ट देवी श्री राधा के प्रति प्रकट करते हुए कहता है- हे जगज्जननी किशोरी! तुम्हारी माया की अधीनता के कारण मैं अभी तक तुमसे विमुख रहा। इसी कारण मैं यह भूल गया कि मैं कौन हूँ। स्वरूप को

भूल जाने के कारण मैंने जगत् को अपना मान लिया। मैं यह भूल गया कि आत्मा का सम्बन्ध एकमात्र तुमसे ही है। मैं तुम्हारा हूँ, तुम मेरी हो इस सिद्धांत को भूल जाने से मैंने शरीर के सम्बंधियों से ही सम्बंध जोड़ा। शरीर के सम्बंधियों से ही आत्मा का सुख माँगता रहा। सुख के स्थान पर मुझे दुःख ही दुःख प्राप्त हुआ। रसिकों की कृपा से अब मुझे यह ज्ञात हुआ कि संसार तो स्वार्थ की पूर्ति हेतु ही है। हे राधे! तुम्हारी कृपा से मुझे अब यह ज्ञान हो गया कि अनन्त आनन्द की स्वामिनी तो तुम हो। अब मैं तुम्हारे द्वार पर आनन्द की भिक्षा माँगने आया हूँ। हे राधे! मुझे सांसारिक भोग मुक्ति एंव वैकुण्ठ नहीं चाहिये। मुझे तो तुम्हारा वही निष्काम प्रेम जो तुमने ब्रजगोपियों को प्रदान किया चाहिये। मुझे तुम्हारी अथवा तुम्हारे जनों की सेवा चाहिये। '**कृपालु**' कहते हैं– हे श्री राधे! मैं सदा तुम्हारे सुख में ही अपना सुख मानूँ।

९८

हरि लै गयो सोइ, मम प्रान सखी।
जो प्रान प्रान हैं कान्ह सखी।
रहि करत यमुन असनान सखी।
तहँ आयो औचक कान्ह सखी।
वाने टेरी मुरलिहिं तान सखी।
हरि लियो मम तन मन प्रान सखी।
मोहिं नहिं रह जब कछु भान सखी।

गिरि मुर्छित कहि "हा कान्ह,, सखी।
जल गहिरे बूड़ी सब जान सखी।
इतने में कूद्यो सोइ पिय कान्ह सखी।
जल ही में चिपटायो मोहिं कान्ह सखी।
दियो अस रस भयो मोहिं भान सखी।
जल ही में मैंने लियो पिय मान सखी।
कहा होगो आगे यह नहिं जान सखी।
तेरो प्रान हैं 'कृपालु' सो तो कान्ह सखी।
तू भी दे दे निज तन मन प्रान सखी॥

भावार्थ— किसी ब्रजगोपी ने अपनी सखी से कहा- अरी सखी! प्राणों के प्राण कृष्ण ने मेरे प्राण हरण कर लिये। मैं यमुना में स्नान कर रही थी, अचानक कृष्ण वहाँ आ गये। उन्होंने मुरली की तान छेड़ दी। मुरली की ध्वनि ने तो मेरे तन, मन, प्राण सभी छीन लिये। जब मुझे सुध बुध नहीं रही तब 'हा कृष्ण' कहकर मूर्च्छित होकर गिर पड़ी। अन्य सखियों ने समझा कि मैं गहरे जल में कूद गई हूँ। कृष्ण भी जल में कूद पड़े। उन्होंने जल के भीतर ही मेरा आलिंगन किया। उस रस को पाकर मुझे चेतना हुई। मैंने जल को साक्षी कर उन्हें अपना प्रियतम स्वीकार कर लिया। भविष्य में क्या होगा, यह मैं नहीं जानती। '**कृपालु**' सखी से कहते हैं- वह कृष्ण तेरा प्राण-स्वरूप है, तू भी अपना तन, मन, प्राण उसे अर्पण कर दे।

११

सुनु अनहोनी होनी भई आजु सखी।
नहिं तोसो मैं छिपावूँ कछु आजु सखी।
मैं तो दधि बेचन गइ आजु सखी।
सँग रहिँ औरहुँ सखि आजु सखी।
इतने में आयो तहँ पिय आजु सखी।
वाने कही मोते इत को आ आजु सखी।
परी किरकिरि मम दृग आजु सखी।
टुक दे निकारि किरिकिरि आजु सखी।
मैंने देखी जाके वाके दृग आजु सखी।
न थी किरकिरि दृग वाके आजु सखी।
पुनि वाने अस मारी आँखि आजु सखी।
मैं तो भई मतवारी लखि आजु सखी।
जब गिरन लगी छिति आजु सखी।
तब पकरि लियो वाने आजु सखी।
लहि रस अस परसन आजु सखी।
वारी तन मन प्रानन आजु सखी।
जनि तू 'कृपालु' फूली फिरे आजु सखी।
तूने अपना गमाया सब आजु सखी॥

भावार्थ— किसी गोपी ने अपनी अन्तरंग सखी को आपबीती सुनाई। ब्रज गोपी ने कहा–हे सखी! आज तो अनहोनी हो गई। मैं तुझसे कुछ भी छिपाउँगी नहीं। मैं आज कुछ सखियों

के साथ दही बेचने गई थी। वहां नंदनंदन आ गये। वे मुझसे बोले- सखी! तनिक मेरे समीप आना। मेरी आँख में कंकड़ गिर गया है, तू उसे निकाल दे। मैं उनके नेत्र खोलकर निकालने लगी। मुझे नेत्र में कंकड़ तो नहीं दिखा। उन्होंने तभी कटाक्षपात किया। मैं अपनी सुध बुध भूलकर मतवाली हो गई। बेसुध होकर जब पृथ्वी पर गिरने लगी तब यशोदानंदन ने अपने हाथों से मुझे पकड़ लिया। उस स्पर्श में इतना रस था कि मैंने अपना तन, मन, प्राण निछावर कर दिया। '**कृपालु**' सखी के प्रति कहते हैं- तू इस आनन्द को पाकर गर्व मत कर। आज तुझे प्राप्त नहीं हुआ तेरा सब कुछ नष्ट हो गया है।

१००

होड़ परी पिय प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
हौं भाजौं तुम पकरहु प्यारी
प्यारिहिं कह बनवारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
पुनि तुम भाजहु कह बनवारी,
हौं पकरौं तोहिं प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
जो तुम पकरि लेहु मोहिं प्यारी,
हार्‌यो हौं बनवारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
जो तोहिं पकरहुँ हौं बनवारी,
हारि गई तुम प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
जो हारौं तो हौं बनवारी,

ब्याहु करहुँ तोहिं प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
जो हारहु मो ते तुम प्यारी,
ब्याहहु तुम बनवारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
प्यारी कह हौं कबहुं न हारी,
हारेउ नित बनवारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
करन परेगो तोहिं बनवारी,
ब्याहु मोहिं कह प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
भजत पकरि गयो उत बनवारी,
पकरि गईं इत प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
जीति सकेउ नहिं उत बनवारी,
जीति सकीं नहिं प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी।
ब्याहु 'कृपालु' न करु बनवारी,
ब्याहु न करु तुम प्यारी, प्यारी प्यारी प्यारी॥

भावार्थ— आज प्रियतम कृष्ण एवं प्यारी राधा में होड़ लगी है। प्यारी राधा से प्यारे कृष्ण ने कहा- हे प्यारी! मैं भाग रहा हूँ, तुम मुझे पकड़ो। तुम भागो तो मैं तुम्हें पकड़ूँगा। यदि तुम मुझे पकड़ लेती हो तो मैं तुम्हारे समक्ष अपनी पराजय स्वीकार कर लूँगा। यदि मैंने तुम्हें पकड़ लिया तो तुम मेरे द्वारा पराजित मानी जाओगी। यदि मैं तुमसे पराजित होता हूँ तो तुम्हारे साथ विवाह करूँगा यदि तुम मुझसे पराजित होती हो तो तुम मेरे साथ विवाह कर लेना। श्री राधा ने उत्तर दिया। हे कृष्ण! अभी तक मैं कभी तुमसे पराजित नहीं हुई। सदा ही तुम मेरे समक्ष परास्त हुए हो। भोली भाली राधा छली कृष्ण

की चाल को न समझ सकने से कहने लगीं हे कृष्ण! तुम सदा ही मुझसे पराजित होते हो, अतः तुम्हें मेरे साथ विवाह करना पड़ेगा। भागते हुए कृष्ण श्री राधा द्वारा पकड़ लिये गये। इधर दौड़ती हुई भानुनन्दिनी को नंदनंदन ने पकड़ लिया। न तो श्री कृष्ण ही राधा के सम्मुख जीत सके, न ही श्री राधा को विजय श्री प्राप्त हुई। **'कृपालु'** कहते हैं- हे श्री कृष्ण! न तो तुम ही श्री राधा से विवाह कर सकते हो न ही श्री राधा तुमसे विवाह कर सकेंगी।